श्री जैन श्वेताम्बर तीर्थ केसरियाजी मेवाड़ (उदयपुर) एवं अन्य महत्वपूर्ण तीर्थों का इतिहास

लेखक, सम्पादक, संकलन
मोहनलाल बोल्या

प्रकाशक :
सर कीकाभाई प्रेमचन्द ट्रस्ट, गज मंदिर
(केसरियाजी), ऋषभदेव (राज.)

लेखक, संकलक एवं सम्पादक :
मोहनलाल बोल्या
37, शांति निकेतन कॉलोनी,
बेदला-बड़गांव लिंक रोड़,
उदयपुर-313011 (राजस्थान)
मोबाइल : 94613 84906

संशोधक :
दलपत सिंह दोशी
पुत्र श्री नन्दलाल जी दोशी
37, गायत्री नगर, काशीपुरी,
हिरण मगरी, सेक्टर 5, उदयपुर (राज.)
मोबाईल : 94147 58157

डिजाइनिंग एवं प्रिन्टिंग :
मल्टी वेव ग्राफिक्स (प्रवीण दक)
सुमन ड्राईक्लिनर्स के ऊपर,
50, कोलीवाड़ा, बापू बाजार,
उदयपुर (राज.), मो. : 98292 44710
ई-मेल : multiwavegraphics@gmail.com

प्रकाशन वर्ष :
जनवरी, 2022

मूल्य :
स्वाध्याय

प्रथम दादा गुरु
श्री जिनदत्त सूरिश्वर जी म.सा.
जिनदत्तसूरी जैन धर्मशाला,
दादावाड़ी, सूरजपोल, उदयपुर (राज.)

॥ऊँ ह्रीं. अर्हम् श्री आदिनाथाय नमः ॥

श्री केसरियाजी (मेवाड़) ऋषभदेव

तहसील खेरवाड़ा, जिला उदयपुर (राजस्थान)

श्री गज मंदिर, ऋषभदेव (केसरिया जी)

सम्पर्क : 94134 67651

ऋषभदेव उदयपुर से 65 किलोमीटर दूर उदयपुर-अहमदाबाद रोड पर स्थित है। यह एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। केसरियाजी मंदिर मुख्य आकर्षण का केन्द्र प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव का मंदिर है।

स्थानीय भील भी 'केसरियाजी' देवता की पूजा करते हैं। यहां स्थित धर्मशाला में 165 कमरे हैं जिसमें से 65 AC कमरे हैं। मंदिर सफेद संगमरमर पत्थर से बना हुआ है। गज मंदिर में प्रतिमा जी कसौटी पत्थर से बनी हुई है जो दर्शनीय एवं अति मनभावन प्रतिमा है। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा 14 फरवरी, 2011 में वर्तमान गच्छाधिपति आचार्यश्री जिन मणीप्रभ सागर सूरिश्वर जी म.सा. एवं विशाल साधु-साध्वी भगवंतों की निश्रा में हुई ।

अनुक्रमणिका

1.	समर्पित : गुरूवर्या साध्वी महत्तरा पद विभुषिता प.पू. साध्वी श्री मनोहर श्रीजी म.सा.	6
2.	आशीर्वचन : प.पू. खतरगच्छाधिपति आचार्यश्री जिनमणि प्रभसागर सूरिश्वर जी म.सा.	7
3.	लेखक का अभिमत : मोहनलाल बोल्या	8
4.	जीवन परिचय : लेखक मोहनलाल बोल्या	9
5.	आभार, अभिनन्दन	10
6.	शुभकामना संदेश	11-14
7.	लिपि संशोधक परिचय एवं आभार : श्री दलपतसिंह दोशी	15
8.	ऋषभदेव चातुर्मास का विवरण	16-17
9.	चातुर्मास प्रवेश पर आयोजित कार्यक्रम की झलकियां	18-19
10.	श्री केसरिया जी तीर्थ का इतिहास : साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी म.सा.	20-26
11.	श्री केसरिया जी का इतिहास : साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी म.सा.	27-33
12.	भगवान ऋषभदेव का जीवन दर्शन : साध्वी श्री स्वर्णोदया श्रीजी म.सा.	34-35
13.	श्री ऋषभदेव मन्दिर : साध्वी श्री सत्योदया श्रीजी म. सा.	36-39
14.	श्री केसरिया जी तीर्थ का सम्पूर्ण विवरण : श्री मोहनलाल बोल्या	40-46
15.	श्री केसरिया जी (मेवाड़) तीर्थ, धुलेवा नगर (उदयपुर) : श्री मोहनलाल बोल्या	47-50
16.	कवियों द्वारा श्री केसरिया तीर्थ का महत्व व छन्द (प्रमाण)	51
17.	प्रतिमा का वर्णन	52-61
18.	विश्वास, श्रद्वा व भक्ति का स्वरूप	62-63
19.	श्री केसरियाजी तीर्थ का विवाद	64-70
20.	श्री जैन दादावाड़ी (केसरिया जी तीर्थ) ऋषभदेव	71
21.	श्री आदिनाथ भगवान का मंदिर, ऋषभदेव : सर कीका भाई प्रेमचंद ट्रस्ट	72-74
22.	श्री आदिनाथ (ऋषभदेव) भगवान का मंदिर, केसरियाजी	75-78
23.	श्री ऋषभदेव भगवान के चरण-पादुका मंदिर, ऋषभदेव	79
24.	श्री भटेवा पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ, चाणस्मा	80-81
25.	श्री मनमोहन पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ, कम्बोई	82
26.	श्री कल्याण पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ, वीसनगर	83
27.	श्री मुनिसुव्रत स्वामी का मंदिर, बड़नगर	84
28.	श्री आदिश्वर भगवान का मंदिर बड़नगर	85
29.	श्री महावीर भगवान का मंदिर, बड़नगर	86
30.	श्री आदीश्वर भगवान का मंदिर बड़नगर	86
31.	श्री चन्द्रप्रभ भगवान का तीर्थ, मोती सिन्दूर	87
32.	सम्राट अकबर द्वारा लिखित आदेश की प्रति	88-90
33.	श्री केसरिया जी मंदिर विवरण (गुजराती)	91-95
34.	अष्टापद तीर्थ : हिमालय श्रृंखला का पर्वत	96-98
35.	मंदिर क्यों बनाए जाते हैं : भाग-2	99-100
36.	श्री आदिनाथ भगवान : श्री कुलापाक जी तीर्थ (आन्धप्रदेश)	101-102
37.	श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर, नवसारी	103
38.	श्री भुवनभानु मानस मंदिर (शत्रुंजय धाम), शाहपुर (मुम्बई)	104
39.	मूर्तिपूजक जैन श्वेताम्बर अनुयायी सदस्य ध्यान देवें	105
40.	खम्भात नगर	106-107
41.	श्री पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर, खम्भात	108
42.	श्री अमीझरा पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर, गन्धार	109
43.	श्री आदिनाथ भगवान	109
44.	श्री स्तंभन पार्श्वनाथ जैन तीर्थ आणंद (गुजरात) (चित्र)	110

समर्पित

गुरूवर्या साध्वी महत्तरा पद विभुषिता

परम पूज्य साध्वी श्री मनोहर श्रीजी म.सा.

सत्प्रेरणा

प.पू. साध्वी अभ्युदया श्रीजी म. सा.

प.पू. साध्वी स्वर्णोदया श्रीजी म. सा.

प.पू. साध्वी सत्योदया श्रीजी म. सा.

प.पू. खतरगच्छाधिपति आचार्य
श्री जिनमणिप्रभ सागर सूरिश्वर जी म.सा.

गौरवमयी भारत की पुण्यभूमि तीर्थो के पवित्र वातावरण से ओतप्रोत है। जैन धर्म के विशिष्ट तीर्थो में श्री केशरियाजी तीर्थ का अपना एक अनूठा स्थान है । यह जैन व जैनेतर सभी लोगों का परम श्रद्धा धाम है। श्री केशरियाजी नामक उपनाम से प्रसिद्ध ऋषभदेव तीर्थ के मूलनायक श्री केशरियानाथ प्रभु की प्रतिमा की प्राचीनता शास्त्र सिद्ध है।

तीनों लोकों में पूजित यह वही प्रतिमा है, जो लंका नगरी में रावण की द्वारा पूजी गई थी। यह वही प्रतिमा जो पहले उज्जैन में थी और इसी प्रतिमा के पक्षाल–जल के छिड़काव से श्री पाल राजा का कोढ़ रोग दूर हुआ था। बाद में यह प्रतिमा वलाड़ देश के बड़ौद नगर में पहुंची और वहां से प्रतिमा यह प्रतिमा वर्तमान ऋषभदेव गांव में विराजित हुई। श्री केसरियाजी तीर्थ की महिमा अपरम्पार है। जो महिमा सनातन धर्म में हरिद्वार की है, वही महिमा जैन धर्म में केशरिया जी की है।

कहावत है :

श्री शत्रुंजय एक बार, केशरिया जी बार–बार

इस पावन भूमि पर गज मंदिर के निर्माण से इस तीर्थ की महिमा परम जीवंत हो गई हजारों–हजारों यात्रियों के आवागमन से श्री केशरिया जी का जयघोष पुनः दिग्दिगंत में गूंज उठा है।

सन 2020 में साध्वी रत्ना श्री अभ्युदयाश्रीजी आदि ठाणा 3 का गजमंदिर–केशरिया जी में संपन्न हुआ चातुर्मास शासन प्रभावना और कई दृष्टियों से बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ। उन्होंने प्रवचन आदि माध्यमों से स्थानीय जैन श्री संघ में संस्कारों का बखूबी सिंचन किया।

चातुर्मास की पावन स्मृति में प्रकाशित हो रहा प्रस्तुत ग्रंथ इतिहासके रसिक वर्ग के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। इसके लेखन, संपादन और प्रकाशन में साध्वीजी का परिश्रम तो अनुमोदनीय रहा ही है, साथ ही से श्री मोहनलाल जी बोल्या, श्री गजेंद्र जी भंसाली का भी बहुत ही अनुमोदनीय पुरुषार्थ रहा है ।

श्री गिरनार महातीर्थ
1 जनवरी 2022

(जिन मणि परमेश्वरी)

लेखक का अभिमत

– मोहनलाल बोल्या

जैन धर्म में प्रथम तीर्थंकर, प्रथम राजा, प्रथम समाज सुधारक श्री आदिनाथ भगवान का नाम है। आदिनाथ भगवान को ऋषभदेव भगवान भी पुकारा जाता है क्योंकि जब वे गर्भावस्था में रहे तो उनकी माता ने स्वप्न में ऋषभ देखा था, इसलिए उनका नाम ऋषभदेव नियत किया। यह युग उस समय युगलिक युग कहलाता था अतः दो संतानों की उत्पत्ति जिसमें एक पुरूष व स्त्री, मान्यता के अनुसार ही आपस में शादी करते थे। उनका ही परिवार आगे बढ़ने लगा। इस प्रकार मरुदेवी माता ने एक पुत्र ऋषभदेव व एक पुत्री सुमंगला को जन्म दिया ।

अधिकतम सभी तीर्थों का इतिहास मिलता है लेकिन ऋषभदेव भगवान का मंदिर जो मेवाड़ में स्थित है। यह तीर्थ मेवाड़ का सर्व अति प्राचीन है, इसका इतिहास बहुत कम उपलब्ध है और धर्म विशेष के अपने–अपने विचारों में विभक्त है। इस विषय में साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी आदि ठाणा 3 केसरिया जी पहुँचे और कोरोना (कोविड–19) महामारी के फलस्वरूप उन्हें केसरियाजी ग्राम में ही चतुर्मास करना पड़ा। इस लॉकडाउन की अवधि में उन्होंने सोचा कि इसका इतिहास तैयार किया जाए और सर कीकाभाई प्रेमचन्द्र ट्रस्ट गज मंदिर, केसरियाजी के महासचिव श्री गजेन्द्र जी भन्साली से वार्ता की और श्री भन्साली जी ने लेखक का नाम सुझाया। साध्वी श्रीजी ने जब इसका इतिहास लिखने के लिए लेखक को कहा तो मैंने अपनी सहमति जताई।

लेखक को इस योग्य समझा जिसके लिए मैं साध्वी म. सा. व श्री गजेन्द्र जी भन्साली सा. के प्रति अपनी कृतज्ञता का ज्ञापित करते हुए हृदय से आभार प्रदर्शित करता हूँ व अभिनन्दन करता हूँ। मंदिर के बारे में जो भी वास्तविकता है वह ईमानदारी से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

यह संभव है कि प्रकाशन, लेखक एवं संकलन में कुछ कमियां रह गई होगी उसके लिए मिच्छामि दुक्कड़म।

(मोहनलाल बोल्या)

लेखक का जीवन परिचय

नाम	:	**मोहनलाल बोल्या**
माता	:	स्व. श्रीमती गुलाबकुंवर जी बोल्या
पिता	:	स्व. श्री रोशनलाल जी बोल्या
जन्म स्थल	:	उदयपुर
जन्म दिनांक	:	15 जून, 1936
शिक्षा	:	बी.कॉम, एम.ए. (समाजशास्त्र)
पत्नी	:	श्रीमती सुशीला बोल्या
धर्म	:	जैन धर्म, मूर्तिपूजक समाज
व्यवसाय	:	सेवानिवृत जिला परिवीक्षा एवं समाज कल्याण अधिकारी

प्रकाशित, संपादित पुस्तकों की सूची :

- उदयपुर नगर के जैन श्वेताम्बर मंदिर एवं मेवाड़ के प्राचीन जैन तीर्थ
- श्री जैन श्वेताम्बर तीर्थ – केशरिया जी
- मेवाड़ के प्राचीन जैन तीर्थ – देलवाड़ा के जैन मंदिर
- नवकार मंत्र स्मारिका
- मेवाड़ के जैन तीर्थ भाग – 1
- नमोकार मंत्र – महामंत्र (मौन साधना, मंत्र)
- मेवाड़ के जैन तीर्थ भाग – 2
- मेवाड़ के जैन तीर्थ भाग – 3
- वागड़ प्रदेश के जैन श्वेतामबर मंदिर
- सिरोही एवं पाली जिले के जैन श्वेताम्बर मंदिर
- जैन धर्म का मूल आधार 'आगम'
- जिन दिग्दर्शन
- जैन धर्म के 24 तीर्थंकर
- मरुधर क्षेत्र के प्रमुख जैन श्वेताम्बर एवं अन्य मंदिर
- श्री जैन श्वेताम्बर तीर्थ केसरियाजी मेवाड़ (उदयपुर) एवं अन्य तीर्थों का इतिहास
- महासभा दर्शन (मासिक पत्रिका) (जनवरी, 2011 से जनवरी, 2016 तक)

संस्थागत कार्य :

- कार्यकारिणी सदस्य : श्री जैन श्वेताम्बर महासभा, उदयपुर
- संयोजक : ज्ञान खाता
- श्री जैन श्वेताम्बर चतराम का उपासरा, उदयपुर

आभार, अभिनन्दन

लेखक द्वारा प्रस्तुत यह 15 वीं पुस्तक है, पूर्व प्रकाशनों में, प्रकाशन एवं संकलन कार्यो में, संदर्भित पुस्तक उपलब्ध करवाने में निम्न महान सहयोगकर्ताओं ने द्रव्य प्रदान किया जिससे लेखक का मनोबल बढ़ता गया और निरन्तरता बनी रही। साथ ही पाठकों को मंदिरों के इतिहास व आवश्यक जानकारियां संकलित कर प्रस्तुत कर सका, जिससे लेखक सभी का आभारी है व सभी का अभिनन्दन करता है।

1) श्री प.पू. स्व. देशनादक्ष प्राचार्नी शास्त्रोद्धारक श्री विजय हेमचंद्र सूरीश्वर जी म.सा.
2) श्री प.पू. तपोनिधी, श्री विजय कल्याणबोधि सूरीश्वर जी म.सा.
3) पं. पू. श्री विजय अपराजित सूरीश्वर जी म.सा.
   प.पू. श्री सिद्धहस्त लेखक विजय पूर्णचन्द्र सुरि जी म.सा. एवं
   सभी साधु–साध्वी वृन्द म.सा.
1) श्रीमती सुशीला बोल्या धर्मसहायिका श्री मोहनलाल बोल्या
2) श्राविका श्रीमती सन्तोष धर्मसहायिका श्री दलपत सिंह भन्साली
   दोनों ने इस संदर्भित पुस्तक को पढ़कर सुनाने में सहयोग प्रदान किया जिससे संशोधन करने में आसानी रही।
3) श्री दलपतसिंह पुत्र श्री नन्दलाल जी जोशी उदयपुर ने संशोधन का कार्य में महत्तवपूर्ण सहयोग प्रदान किया ।

संदर्भित पुस्तकें

1) श्री केसरिया जी तीर्थ का इतिहास : चन्दनमल नागौरी
2) मेवाड़ के जैन तीर्थ : मोहनलाल बोल्या
3) श्री जैन तीर्थ सर्व संग्रह : श्री कल्याणजी, आनन्दजी पेढ़ी, अहमदाबाद
4) प्राचीन लेख संग्रह : श्री पुनमचन्द्र नाहर
5) उदयपुर राज्य का इतिहास : श्री गौरी शंकर ओझा
6) मेवाड़ के ऐतिहासिक इतिहास का सर्वेक्षण : हुक्म सिंह भाटी,
7) प्रस्तावना : केसरियानाथ सह–सलाह
8) भजनलाल ..... हुक्म लोढ़ा

शुभ संदेश

बाबुलाल बोहरा
अध्यक्ष
सर कीका भाई प्रेमचन्द्र ट्रस्ट
गज मंदिर, केसरियाजी

प्राचीनतम तीर्थ श्री केसरियानाथजी की पावनधरा पर "गज–मन्दिर" परिसर में हमारी विनती को स्वीकार कर परम पूज्य गच्छाधिपति आचार्य श्री मणिप्रभसागरजी म.सा. ने उनकी आज्ञानुवर्ती सरलमना साध्वीजी श्री अभ्युदया श्रीजी, प्रवचनकार साध्वीजी श्री स्वर्णोदया श्रीजी एवं तपस्वी साध्वीजी श्री सत्योदया श्रीजी आदि ठाणा का चातुर्मासा करने की स्वीकृति दी। प्राचीन तीर्थ पर श्वेताम्बर आमना की किसी साधु अथवा साध्वी का 123 वर्ष पश्चात् पहला चातुर्मास था। स्थानीय संघ व ट्रस्ट पदाधिकारियों में हर्ष व्याप्त हो गया।

पूज्य साध्वीजी के प्रवचन से स्थानीय संघ, सनातन धर्म के अनुयायी, दिगम्बर आमना के श्रावक व तीर्थ पर आगन्तुक श्रद्धालु यात्रीगणों ने प्रवचन व प्रेरणा का भरपूर आनन्द प्राप्त किया। स्थानीय संघ के श्रावक व श्राविकाओं के दैनिक दिनचर्या में परिवर्तन हो गया। पर्युषण पर्व व अढ़ाई महोत्सव का आयोजन तीर्थ पर पहली बार भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। संपूर्ण चातुर्मास की उपलब्धियों पर यह पुस्तक भविष्य में एक अनुपम दस्तावेज बनेगी। पूज्य साध्वीजी म.सा. के भविष्य की उज्जवल कामना के साथ आग्रह करता हूँ कि निकट भविष्य में आप एक चातुर्मास और करने का भाव रखावें।

मेरी परम पूज्य गच्छाधिपति जी श्री मणिप्रभसागर जी म.सा. से विनती है कि केसरियाजी की पावन पवित्र भूमि "गज–मन्दिर" परिसर में प्रति वर्ष किसी न किसी साधु अथवा साध्वी भगवन्त का चातुर्मास अवश्य दिरावें।

पिछले 40 वर्षो से श्री मोहनलाल जी बोल्या ने मेवाड़, वागड़, गोरवाड़ एवं मारवाड़ के श्वेताम्बर जैन समाज के मंदिरों का अध्ययन करके पुस्तकें प्रकाशन का कार्य किया है, इस हेतु मैं ट्रस्ट की ओर से हार्दिक अनुमोदना करता हूं।

सधन्यवाद।

भवदीय
(बाबुलाल बोहरा)
अध्यक्ष

शुभ संदेश

मांगीलाल परमार
वरिष्ठ ट्रस्टी, संचालक मण्डल
सर कीका भाई प्रेमचन्द्र ट्रस्ट
गज मंदिर, केसरियाजी

हमारे लिए सौभाग्य की बात है कि प्राचीन एवं चमत्कारी तीर्थ श्री केसरियानाथ जी की पावन धरा पर 'गज मंदिर' परिसर में संवत 2075 का चातुर्मास परम पूज्य गच्छाधिपति आचार्य श्री मणिप्रभ सागर जी म.सा. की आज्ञानुवर्ती प्रवचनकार साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी, विद्धान साध्वी स्वर्णोदया श्रीजी एवं तपस्वी साध्वी श्री सत्योदया श्रीजी के सान्निध्य में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। पूज्य गच्छाधिपति एवं 'गज मंदिर' के कल्पनाकार आचार्यश्री ने हमारे ट्रस्ट एवं मेरी विनती को स्वीकार कर चातुर्मास दिया।

कई पीढ़ियों से हमारी श्री केसरियानाथ जी भगवान में गहरी आस्था है जो निरन्तर वर्तमान पीढ़ी व भावी पीढ़ी में बरकरार है। वर्ष में दो–तीन बार तीर्थ पर श्री केसरियानाथ जी के प्राचीन मंदिर में तथा 'गज मंदिर' में सेवा, पूजा एवं केसर चढ़ाने का लाभ हमें प्राप्त हो रहा है।

चातुर्मास जागृति का संदेश लाता है। चातुर्मास के दौरान परिवार में सभी की धर्म के प्रति आस्था प्रबल होती है। धुलेवा नगरी में रहने वाले सभी जैन, अजैन, दिगंबर व अन्य धर्म प्रेमी बंधुओं ने इस चातुर्मास का भरपूर आनंद प्राप्त कर अपनी आत्मा के कल्याण हेतु साधना की। 'गज मंदिर' परिसर में हम हर वर्ष चातुर्मास करवाने का प्रयास करेंगे ताकि तीर्थ की आस्था आम जन के मन में स्थापित हो।

मैं आपके भावी संयमित जीवन की मंगलकामना करता हूं तथा आाप दीर्घायु होकर शतायु हो एवं शासन को और ऊंचाई पर ले जाने हेतु अग्रसित हो

सधन्यवाद।

भवदीय

(मांगलाल परमार)
वरिष्ठ ट्रस्टी, संचालक मण्डल

शुभ संदेश

गजेन्द्र भंसाली
महासचिव
सर कीका भाई प्रेमचन्द्र ट्रस्ट
गज मंदिर, केसरियाजी

देश के प्राचीनतम तीर्थो में अग्रिम पंक्ति पर श्री केसरिया जी तीर्थ माना जाता है। इसकी प्राचीनता अभी तक तय नहीं हो पाई है परन्तु लगभग 2000 वर्ष पुराना यह जिनालय माना जा रहा है। उपलब्ध दस्तावेजों के आधार पर इस प्राचीन जिनालय की व्यवस्था, श्वेताम्बर जैनो के पास ही थी, आजादी के बाद मेवाड़ स्टेट का देवस्थान विभाग का राजस्थान सरकार में विलीन होने से सन् 1955 में श्वेताम्बर जैनों ने विधिवत रुप से तीर्थ का चार्ज राज्य सरकार के देवस्थान विभाग को अस्थायी तौर पर सौंप दिया, जो अभी तक चल रहा है।

गत 123 वर्षो से तीर्थ पर श्वेताम्बर मत के किसी साधु–साध्वी का चातुर्मास नहीं हुआ। यह हमारे लिए सौभाग्य का विषय था कि ''गज मंदिर'' सर कीका भाई प्रेमचन्द ट्रस्ट, केसरिया जी के ट्रस्ट मण्डल के आग्रह को स्वीकार कर परम पूज्य खतरगच्छाधिपति आचार्य श्री जिनमणिप्रभसूरि जी म.सा., विदुषी साध्वी छतीसगढ़ शिरोमणी श्री मनोहर श्रीजी म.सा. के शिष्या साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी म.सा. को सन् 2020–21 का चातुर्मास ''गज मंदिर'' परिसर, केसरिया जी की पावन भूमि पर करने हेतु आज्ञा दी। ट्रस्ट व स्थानीय बीसा हुमड़ समाज में खुशी की लहर प्राप्त हो गयी।

आपका चातुर्मास इस तीर्थ पर हम सभी के लिए ज्ञान, तप व प्रेरणा की दृष्टि से जबरदस्त उपयोगी रहा, स्थानीय संघ के लोगो में चातुर्मास का पहला अनुभव सफल रहा। तीर्थ के लिए यह चातुर्मास स्वर्णअक्षरों में अंकित हो गया। पूज्य सभी साध्वी जी का हृदय से आभारी हूँ कि आपने तीर्थ पर चातुर्मास कर हमें धन्य बनाया। मैं आपके दीर्घायु जीवन की कामना करता हूँ। तीर्थ पर आपने तप व साधना कर इस पावन पवित्र भूमि में जो ऊर्जा भरी, तंद हेतु आभार...

साथ ही वरिष्ठ सुश्रावक आदरणीय श्री मोहनलाल जी सा. बोल्या के पिछले 40 वर्षो से मेवाड़, वागड़, गोरवाड़ एवं मारवाड़ के श्वेताम्बर जैन समाज के मंदिरों पर गहन अभिरुचि दिखाते हुए स्वयं जाकर अध्ययन करके कई पुस्तकें प्रकाशित की गई है, ऐसे बिरला पुरुष की मैं स्वयं अपनी ओर से एवं ट्रस्ट की ओर से हार्दिक अनुमोदना करता हूं।

सद्भावी
(गजेन्द्र भंसाली)
महासचिव

शुभ संदेश

राज लोढ़ा
कोषाध्यक्ष
सर कीका भाई प्रेमचन्द्र ट्रस्ट
गज मंदिर, केसरियाजी

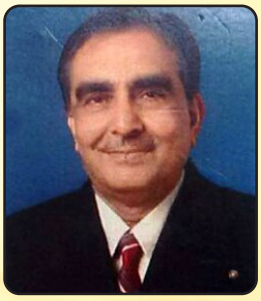

श्री केसरियाजी जी तीर्थ (ऋषभदेव जी) अधिकतर जैन मन्दिरों से भिन्न है, जिसकी श्रेणी तीर्थों में आती है। श्री केसरियाजी का मन्दिर उदयपुर से 65 किलोमीटर दूर अहमदाबाद मेन हाईवे से अन्दर स्थित है, यह तीर्थ आच्छादित पहाड़ों के बीच अपनी स्थापत्यकला से अपना मन मोह लेता है।

इसी तीर्थ के प्रांगण के पास ही सर कीका भाई प्रेमचन्द ट्रस्ट ने जगह खरीद कर भव्यातिभव्य नव निर्माण करवाकर केसरियाजी गज मन्दिर एवं धर्मशाला का निर्माण भी कराया।

इस तीर्थ पर 123 वर्ष पश्चात् खरतरगच्छ परम्परा की साध्वी भगवंत श्री अभ्युदया श्रीजी म.सा. आदि ठाणा 3 ने वर्ष 2020 में कोविडकाल के दौरान चातुर्मास किया। प.पू. साध्वी मा.सा. को प्राचीन केसरिया जी मन्दिर के दर्शन वंदन कर वहां के इतिहास की जानकारी लेकर इस मंदिर के इतिहास को संकलित कर प्रकाशित करने का विचार मन में आया, जिसे इस ट्रस्ट के ट्रस्टियों को अपनी भावना को बताई। ट्रस्ट ने प.पू. साध्वी जी म.सा. की सद्भावना को स्वीकार कर अनुमोदना स्वरूप सहर्ष स्वीकृति देकर उदयपुर के जाने–माने इतिहासकार श्री मोहनलाल जी बोल्या से वार्ता की जिस पर उन्होंने भी अपनी सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर इतिहास संकलन का कार्य पूरा कर प्रकाशित कराने का पूर्ण्य कार्य सम्पादित किया, एतदर्थ ट्रस्ट के सभी सदस्य उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं।

यह पुस्तक जैन धर्म के मन्दिरों पर शोध कार्य करने वालों शोधार्थियों के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होगी। प.पू. साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी म.सा. आदि ठाणा 3 के प्रति भी हम सदैव आभारी रहेंगे, इसके साथ ही उनकी भी अनुमोदना करते हैं।

(राज लोढ़ा)
कोषाध्यक्ष

लिपि संशोधक परिचय एवं आभार

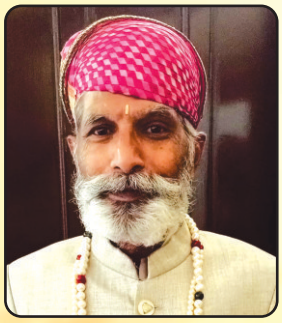

दलपत सिंह दोशी

शत्रुजंय तीर्थ के 16 वें उद्धारक कर्माशाह दोशी का वंशज

पिता : स्व. श्री नन्दलाल जी दोशी
जन्म दिनांक : 19 नवम्बर, 1950
मोबाईल : 94147 58157, 89499 19162
ई–मेल : dalpatsinghdoshi@gmail.com
निवास : 37, गायत्री नगर, काशीपुरी,
हिरणमगरी, सेक्टर 5, उदयपुर (राज.)

माननीय श्री मोहनलाल जी सा. बोल्या,

सादय जय जिनेन्द्र ।

आप द्वारा इस वृद्धावस्था में आँखों से कम दिखाई देने एवं स्वास्थ्य की प्रतिकूलता के बाद भी मेवाड़, वागड़ एवं मारवाड़ के श्वेताम्बर जैन मंदिरों आदि पर अनेक पुस्तकों को सम्पादित कर प्रकाशन किया।

इसके साथ ही वर्तमान में प्रकाशित होने जा रही पुस्तक ''श्री केशरिया जी (ऋषभदेव) तीर्थ एवं अन्य तीर्थों का इतिहास'' नामक पुस्तक के लिए भी लिपि संशोधन के लिए मुझे अवसर प्रदान किया। यह मेरा अहोभाग्य है। यह सभी कार्य मेरी कल्पना से परे था फिर भी मेरा टाईपिंग व्यवसाय होने से मैंने इस कार्य को पूर्ण लगन एवं निष्ठा से निःस्वार्थ करने का बीड़ा उठाया एवं अपनी योग्यता के आधार पर इन पुस्तकों में लिपि संशोधन का कार्य पूर्ण रूपेण किया है, फिर भी कहीं त्रुटियां रह सकती है । उसके लिए मैं हृदय से क्षमा चाहता हूँ।

(दलपत सिंह दोशी)

पूर्व पार्षद एवं लोकतंत्र सैनानी

ऋषभदेव नगर में चातुर्मास का विवरण

गौरवशाली परम्पराओं से अलंकृत, महाराणा प्रताप आदि वीरों की ऐतिहासिक भूमि, दानवीर भामाशाह की कर्मस्थली, अनेक तीर्थों की तीर्थभूमि, भक्ति बावरी मीरा की धर्म भूमि, 1444 ग्रंथ के रचियता सूरिपुंगव हरिभद्रसूरी से गौरवान्वित पुण्यभूमि राजस्थान की गरिमामयी मेवाड़ प्रदेश की पाटनगरी सांस्कृतिक शहर झीलों की नगरी–उदयपुर अपनी धर्म की सुवास को लेकर भारत भर में प्रसिद्ध है। उसी तरह अपने प्राकृतिक सौंदर्य के कारण जग प्रसिद्ध है। छोटे–बड़े करीब 40 के आसपास जिनमंदिर है। धर्मशालाएं–भोजनशालाएं आयम्बिलशाला आदि है। प्रतिवर्ष हजारों यात्री दर्शनार्थ पधारते है। विशाल स्तर पर वर्षो से अनेक चातुर्मास होते आए है। विशाल पैमाने पर धर्माराधनाएं होती रहती है।

उदयपुर श्री संघ में हुए चातुर्मास की श्रृंखला में हमारा चातुर्मास 2019 वासुपूज्य स्वामी देरासर में एक अदभूत चातुर्मास हुआ। यह तीर्थ अति प्राचीन प्रभावशाली महिमावंत है। श्रद्धालुओं की उपस्थिति देखकर ऐसा लगता है कि हमेशा मेले जैसा वातावरण बना रहता है। श्रद्धालुओं, भक्तों की भीड़, श्रद्धा, विश्वास को बनाये रखती है।

आदिनाथ भगवान की वर्षगांठ :

हवन, महोत्सव मनाने के लिए हमारी स्थिरिता इस तीर्थ पर रही। हर्ष उल्लास–आनंद–खुशी के मंगल पलों की अंतर हृदय में संझोये हुए। प्रभु की वर्षगांठ धुमधाम के साथ संपन्न हुई।

भगवान आदिनाथ प्रभु का जन्म कल्याणक महोत्सव

यहां पर अति उल्लास श्रद्धा भावना के साथ मनाया जाता है। स्थानीय लोगों की उपस्थिति बहुत ही अधिक होती है। एक मेले जैसा माहौल उपस्थित हो जाता है। पूरे गांव में भव्यातिभव्य सत्य प्रभु की रथयात्रा निकाली जाती है।

यह दृश्य देखने लायक रहता है। इतना पवित्र वातावरण का निर्माण हो जाता है। मन उस दृश्य से दूर हटने का नाम नहीं लेता है। भक्ति संध्या का आयोजन होता है। प्रभु का गुणगान–भक्ति भजन करते है और अपनी आत्मा को पवित्र बनाते है। वर्षीतप के पारणे का आयोजन भी यहां पर होता है। तपस्वी यहां पर पारणा करने आते हैं।

इस बीच, कोविड–19 जैसी महाभयंकर महामारी से पूरा विश्व ग्रसित हो गया। यह बीमारी बढ़ती ही जा रही थी। भयंकर रूप धारण कर लिया था। पूरे भारत में लोक डाउन हो गया था। इसी बीच हमें यहीं रूकना पड़ा। चातुर्मास नजदीक आने लगा। लेकिन बीमारी रूकने का नाम नहीं ले रही थी।

गज परिवार मंदिर के कर्मठ, सेवाभावी सुश्रावक वर्य, श्री गजेन्द्र जी भंसाली सा. ने विनति की, आप यहां पर चातुर्मास की हमें आज्ञा दे। यहां का वातावरण बहुत ही शांत पवित्र, ऊर्जा स्नान है। आपके जप, स्वाध्याय के अनुकूल रहेगा। आपसी भावना को ध्यान रखते हुए हमने भी स्वीकृति दी। स्थानीय श्रीसंघ में अध्यक्ष श्री कुडीचंद जी मलासिया, मनोहरलालजी, वस्तुपालजी आदि समस्त संघ ने भी यहां चातुर्मास करने की विनती की। प्रभु आदिनाथ की कृपा से 125 वर्षों में प्रथम बार चातुर्मास हुआ।

भव्य चातुर्मास प्रवेश : शुभ मुहुर्त में श्री संघ के साथ गाजे–बाजे से बड़ी शालीनता के साथ कीकाभाई प्रेमचंद धर्मशाला–गजमंदिर में मंगल प्रवेश हुआ। काफी संख्या में लोग उपस्थित है। मंगल प्रवेश प्रवचन हुआ। प्रभावना और साधर्मिक वात्सल्य भी रखा गया।

आषाढी चौमासी–चउदस से 9 से 10 एक घंटे तक विविध, विषयों पर प्रवचन होते थे। आषाढी चौमासी चौदस से क्रमिक अहमतप की आराधना प्रारंभ हुई। प्रतिदिन व्याख्यान में एक व्यक्ति अहम के पच्चक्खाण करता था और उनका सम्मान भी होता था। आयंबिल, एकासना आदि विविध तपस्याएं हुई।

सावन सुदि पंचमी को नेमिनाथ प्रभु का जन्म कल्याण महोत्सव सहर्ष मनाया गया। संस्कार वर्धक अनेक नाटक का आयोजन बच्चों के द्वारा हुआ।

ज्ञानर्द्धक प्रश्नोत्तरी पेपर, स्वाध्याय नमस्कार जाप अनेक अनुष्ठान हुए।

श्री पयुषण महापर्व की भव्य आराधना :

पर्वाधिराज महापर्व की आराधना श्री संघ में काफी हर्षोल्लास से हुई। पौषध हुए, मट्ठाईयां हुई। बारसा सूत्र जी वहेरामे, चित्रदर्शन कराने का लाभ लिया। पर्वशिरोमणि श्री संवत्सरी महापर्व भादरवा खुद 4 चौथ के दिन बड़ी शांतिपूर्वक अच्छी तरह सभी ने बारसा सूत्र का श्रवण किया। दोपहर में संवत्सरी सूत्र का श्रवण किया। दोपहर में संवत्सरी प्रतिक्रमण का स्वरूप समझाया तथा समझते हुए शांति से संवत्सरी प्रतिक्रमण कराया। बहुत ही आनंद और शांति से अराधना हुई। श्री संघ के सभी सदस्य प्रसन्न हुए। तपचर्या करने वालों को प्रभावना देकर सम्मानित किया।

शाश्वती ओली की आराधना :

शाश्वती नवपद की ओली के विशेष प्रवचन हुए। आयंबिल की आराधना हुई।

दीपावली महापर्व की आराधना :

दीपावली महार्व के प्रसंग पर निर्वाण समय में प्रभु जो 48 घंटे की दो दिन की अखंड देशना जो दी थी वह अंतिम आगम ग्रंथ उतराध्ययन सूत्र के रूप में प्रसिद्ध है। महावीर प्रभु के जाप हुए। छट्ठ की तपश्चर्या हुई। पटाखे न जोड़ने की प्रतिज्ञा बच्चों ने ली। पौषध भी हुए। निर्वाण लड्डु चढाया गया। नूतन वर्ष की मांगलिक हुई।

प. पू. साध्वी अभ्युदया श्रीजी महाराज सा., प. पू. साध्वी स्वर्णोदया श्रीजी महाराज सा.
प. पू. साध्वी सत्वोदया श्रीजी महाराज सा. का

सर कीका भाई ट्रस्ट गज मंदिर (श्री केसरिया जी)

चातुर्मास प्रवेश पर आयोजित कार्यक्रम

उपस्थित समाजजन :

श्री वीसा हुमड़ श्वेताम्बर संघ केसरिया जी

अध्यक्ष : श्री कुरीचन्द जी मलासिया एवं श्री पुष्पराज जी

सर कीकाभाई ट्रस्ट के

श्री वस्तुपाल जी दावड़ा, श्री सुगन्धीलाल जी मलासिया
एवं श्री मनोहरलाल जी दोषी

प. पू. साध्वी अभ्युदया श्रीजी महाराज सा., प. पू. साध्वी स्वर्णोदया श्रीजी महाराज सा.
प. पू. साध्वी सत्वोदया श्रीजी महाराज सा. का

सर कीका भाई ट्रस्ट गज मंदिर (श्री केसरिया जी)

चातुर्मास प्रवेश पर आयोजित कार्यक्रम

प्रस्तावना

श्री केशरिया जी तीर्थ का इतिहास

– साध्वी श्री अभ्युदया श्रीजी म.सा.

''आदिमं पृथ्वीनां धमादिमं निष्परिग्रहम् ।
आदिम् तीर्थनामं च ऋषभस्वामिनं स्तुमः ।।''

प्रथम राजा, प्रथम मुनि और प्रथम तीर्थपति श्री ऋषभदेव स्वामी, तीन लोक की मर्यादा वाले अवर्णीय स्वरूपवान, युग के योगी अरिहन्त प्रभु श्री ऋषभदेव स्वामी को नमस्कार है।

यह प्रतिमा लगभग 2000 वर्ष पुरानी मानी जाती है। जिसकी ऊँचाई 3½ फीट (108 से. मी.) है। वैदिक धर्म में ऋषभदेव भगवान का नाम आठवें अवतार के रूप में आता है। जबकि जैन धर्म में वर्तमान चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर है।

हम साध्वी ठाणा 3 ने वर्ष पूर्व 2019 का चार्तुमास श्री जैन श्वेताम्बर वासुपूज्य महाराज मंदिर, श्री जिनदत्त सूरि दादावाड़ी, सुरजपोल, उदयपुर में सम्पन्न कर स्थानीय मन्दिर के दर्शन व आराधना करने के पश्चात् 2020 का चातुर्मास नवसारी निश्चित होने से केसरिया जी विहार किया। केसरिया जी में प्राचीन तीर्थ के दर्शन किये तथा वहाँ की प्रसिद्धियों को समझा तब हमारे मन में विचार आया कि इस प्राचीन तीर्थ का इतिहास लिखा जाए। उसके लिए मन्दिर की परिक्रमा करते हुए सभी प्रतिमाओं के दर्शन किए।

इस तीर्थ के दर्शन करने पर ऐसा अनुभव हुआ कि यह तीर्थ प्राचीन होते हुए भी अनभिज्ञ है और न्यायालय में विवाद चल रहा है तब इसका इतिहास बनाने का विचार किया तथा संस्था के सचिव श्री गजेन्द्र जी भन्साली से बात की तो उन्होंने सहमति प्रदान करते हुए लेखक श्री मोहनलाल जी बोल्या का नाम सुझाया, तब श्री भन्साली के माध्यम से श्री बोल्या जी ने विस्तृत जानकारी देते हुए सामग्री संकलन करने का आश्वासन दिया और हमारे द्वारा भी मंदिर की विस्तृत परिक्रमा करने पर जो विचार आए उसका वर्णन निम्न प्रकार है :

तीर्थ का महत्व :

जैन धर्म में तो तीर्थों का एक अद्‌भूत महत्व है। हमारे परमेश्वर परमात्मा वीतराग प्रभु को भी हमने तीर्थंकर कहा है अर्थात् तीर्थ के प्रवर्तक, तीर्थ स्थापक।

हमारे आचार्यों ने तीर्थ की परिभाषा दी है, जैन धर्म में तीर्थ की परिभाषा निम्नानुसार है : जिसके द्वारा तरा जाये उसे तीर्थ कहते हैं। जहाँ पर जाने से या जिसके प्रभाव से दाह (ताप) का शमन होता हैं, तृष्णा का नाश होता है और मल (मैल) दूर हो जाता है उसे तीर्थ कहते हैं जिनके प्रभाव से मन को शान्ति, शीतलता, तृप्ति और पवित्रता की प्राप्ति होती हैं।

द्रव्य रूप से जहाँ जाने से शान्ति मिलती है, मन तनाव मुक्त हो जाता हैं, एक तृप्ति का अनुभव होता है। शरीर के मैल दूर हो जाते हैं, पवित्रता आती हैं। वे महापुरूषों की कर्मभूमि,

धर्मभूमि तपोभूमि, निर्वाणभूमि, पर्वतीय स्थल, नदी आदि के संगम भी तीर्थ कहलाते हैं।

दो प्रकार के तीर्थ बताये है :

1) जंगम तीर्थ : साधु–साध्वी, श्रावक श्राविका

2) स्थावर तीर्थ : सम्मेत शिखर, शत्रुंजय, आबू, गिरनार

ज्ञानी–मुनियों आदि को चलते फिरते जंगम तीर्थ कहते हैं। हम जहां भी जाते है, वहां का वातावरण धर्ममय हो जाता है, पवित्रता की लहर चल पड़ती है। तीर्थंकरों की कल्याणक भूमि को स्थावर यानि स्थिर तीर्थ कहा जाता है। तीर्थ भूमि मन को पवित्र संस्कार देती है, श्रद्धा बढ़ाती है और आत्मबल को प्रचण्ड बनाती है।

वास्तव में वह पवित्र स्थान, वह पुण्य भूमि जहां पर लोग धर्मभाव के साथ श्रद्धापूर्वक यात्रा करते हैं, दर्शन पूजा करते हैं। जहाँ जाने से तन–मन पवित्र हो जाते है। जहाँ पर किसी महापुरूष अरिहंत भगवान का जन्म–दीक्षा, निर्वाण आदि पवित्र कार्य हुआ हो, वह तीर्थ भूमि है। हमारे भरत क्षेत्र में कुछ शाश्वत तीर्थ है, जैसे सिद्धाचल और कुछ तीर्थ महापुरूषों का निर्वाण आदि कल्याणक होने से वे तीर्थ रूप में पवित्र स्थान माने गये हैं जैसे शत्रुंजय, सम्मेद शिखर, हस्तिनापुर, पावापुरी, राजगृही, गिरनार, आबु आदि। इन तीर्थों के पीछे एक विस्तृत इतिहास खड़ा है, घटनाएँ जुड़ी है और इन घटनाओं की स्मृति के साथ उन तीर्थों की महत्ता महिमा और प्रेरणाएँ जुड़ी हुई है।

तीर्थ भारतीय अध्यात्म का प्राण है, भारतीय संस्कृति का हृदय है। यदि आध्यात्म प्रधान संस्कृति की प्रेरणा, उसका उदातस्वरूप और उसकी पवित्रता का अनुभव करना हो तो तीर्थ स्थान से बढ़कर और कोई ऐसा केन्द्र नहीं है।

इन्हीं तीर्थों ने हमारी संस्कृति की रक्षा की हैं। तीर्थ भूमियों की बदौलत हमारा इतिहास, हमारी परम्पराएं सुरक्षित रही हैं, आज हजारों वर्षों की उथल–पुथल के बाद भी हमारा गौरवमय इतिहास जीवित है।

सम्मेद शिखर पर जहाँ इस अवसर्पिणी काल में 24 तीर्थंकरों में से 20 तीर्थंकरों का निर्वाण हुआ हैं। अगणित तपस्वियों, साधकों ने जिस भूमि पर तपस्या करके केवल ज्ञान प्राप्त किया और सर्व कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्त किया वह भूमि कितनी पवित्र होगी। जहां का कण–कण अध्यात्म और वैराग्य की पवित्र सुरभि से महक रहा हैं। उन राजकणों का स्पर्श ही मन की मलिनता दूर कर देता हैं। वहां के वातावरण में आज भी कितनी शान्ति, कितना आनंद बरस रहा हैं। पापी जीव भी वहाँ की भूमि पर जाकर पापों को भूल जाता हैं। उसकी बुद्धि भी शुद्ध हो जाती हैं। हृदय पवित्र हो जाता है और जन्म–जन्म के संचित पाप नष्ट हो जाते हैं। वह तीर्थभूमि का प्रभाव हैं।

शत्रुंजय तीर्थ का दिव्य प्रभाव ऐसा है कि वहां की यात्रा का संकल्प होते ही मन में पवित्र भावनाएं जगने लगती हैं। उस भूमि का स्पर्श होते ही आत्मा आनंदित, रोमांचित हो जाती हैं।

जहां हवा में आध्यात्म के परम पवित्र परमाणु बिखरे हुए है। ऐसी तीर्थभूमि के दर्शन–स्पर्श, तन–मन को पवित्र बना देता है। बड़े पुण्योदय से ही ऐसी तीर्थ भूमि का दर्शन होता है। राजगृही में भगवान महावीर स्वामी ने 14 चातुर्मास किये। विपुलाचल आदि भूमि पर्वतों पर धन्ना–शांलिभद्र जैसे महान तपस्वियों ने कठोर तप साधना की, गौतम स्वामी जैसे लब्धि निधान महान योगियों ने जहां ध्यान साधना की, आपको लगेगा उन दिव्य परमात्मा महावीर की वाणी का नाद आज भी उन पर्वत शिखरों में वहां सप्तपणी गुफा में गूंज रहा हैं। तीर्थ–भूमि हमारे सिद्ध पुरूषों का भावना शरीर हैं। उनके दिव्य परमाणुओं का आभामण्डल जैसे आज भी हमें प्रभावित और सम्मोहित करता हैं।

वहां के वृक्षों में सुगंधित, सुवासित, जीवनदायी पवन, घाटियों की मनोरमता, गुफाओं के भीतर तपस्वियों के शरीर से निकली प्राण ऊर्जा, उनकी श्वासों से निकले पवित्र परमाणु कण–कण मे व्याप्त है। वहां का कंकर–कंकर जैसे शंकर बना हुआ हैं। वहां की नदियों और झीलों का कलकल संगीत जैसे आज भी उन महापुरूषों की दिव्य ध्वनि सुना रहा है। वहां जाते ही मन पवित्रता और प्रसन्नता में झूमने लगता है। अवर्णनीय शांति और स्फूर्ति महसूस होती है।

भूमि, स्थान और वातावरण का प्रभाव मनुष्य के मन पर पड़ता है। यदि आप उद्यान में घूमे तो फूलों की सुगंध से आपका मन आनन्दित होगा। नदियों के किनारे टहलेंगे, समुद्र तट पर चहल कदमी करेंगे तो वहां की प्राण वायु आपको स्फूर्ति और ऊर्जा देगी। भरपूर ऑक्सीजन मिलेगा और अगर कहीं गंदी गलियों में, कसाईयों के मोहल्लों में चले जायेंगे तो आपका दम घुटने लगेगा। आपकी विचारधारा कुण्ठित हो जायेगी, आपका मन घृणा से भर जायेगा। मंदिर में जायेंगे तो मन में पवित्र विचार उठेंगे।

स्थान क्षेत्र का वातावरण का मन पर प्रभाव होता है इसलिए ज्यादा से ज्यादा पवित्र स्थानों पर ही जाना चाहिए ताकि विचार पवित्र बने रहे। हमारे महान तीर्थंकर साधक तपस्वी जीवन भर कहीं भी विचरते रहें, अन्य देश में भी विचरे, दुर्गम वनों में भी विहार किया, किन्तु जब जीवन का अंतिम समय निकट देखा तब क्यों वे सम्मेत शिखर की ऊँची चोटी पर जाकर ध्यानस्थ हुए ? क्यों वहां जाकर अनशन किया व चार धाती कर्मों का क्षय करते हुए भगवान ऋषभदेव 80 लाख वर्ष पूर्व तक पृथ्वी पर विहार करते रहे ? किन्तु जीवन के अंतिम समय नजदीक देखकर हजारों मुनियों के साथ मोक्ष सिधारे।

भगवान ऋषभदेव भगवान के समय हिमालय पर्वत पर 10 प्रकार के कल्पवृक्ष थे उनसे प्रार्थना करने पर मनुष्य को इच्छित वस्तुए प्राप्त हो जाती थी। कल्पवृक्ष नष्ट होने से मनुष्य की इच्छा अनुसार वस्तुएं प्राप्त नहीं होने लगी तो वे फल, फूल, चावल गेहूँ आदि कच्चे ही खाने लगे तो शारीरिक दुर्बलता बनी रही, वह हजम नहीं हुआ तो पानी में गलाने व छिलके को उतार कर पत्तों का दोना बनाकर प्रयोग करना बताया। समस्याऐं उत्पन्न होती रही उसके अनुसार अग्नि की खोज पत्थरों से अग्नि चेतन कर अन्न पकाना व अन्न उत्पन्न करने की

विधि बताई, इसके पूर्व शिल्पकला का भी ज्ञान कराया कि किस प्रकार मिट्टी का प्रयोग कर बर्तन बनाए और अन्न को पकाए।

शिल्पकला में कुम्हार, मिस्त्री, जुलाहा, नाई, लकड़हारा, किसान वणिक की शिक्षा दी।

उक्त प्रकार से हम कह सकते हैं कि ऋषभदेव भगवान प्रथम शासक, शिक्षक थे तथा उन्होंने प्रचलित सामाजिक परम्परा में परिवर्तन किया। स्वयं ने युगलिक वैवाहिक प्रथा का पालन करते हुए (युगलिक के जोड़े में से एक ही अकाल मृत्यु होने पर) सुनंदा से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये। अतः ऋषभदेव भगवान ने मानव को सामाजिक, शैक्षणिक, संस्कृति, व्यापार, कर्म का सिद्धान्त पुरूषार्थ की कला, शिल्पकला, कृतिज्ञान व सम्पूर्ण मानव जीवन को सामाजिकरण की अवधारण प्रदान कीं वे हर क्षेत्र में प्रथम थे।

भगवान ऋषभदेव ने स्त्री शिक्षा पर भी बल दिया। उन्होंने अपनी ही पुत्रियाँ ब्राह्मी और सुन्दरी को 64 तरह की विद्याएं सिखाई व गणित में उल्लेखित है। यहाँ तक की धर्म क्षेत्र में भी वे प्रथम रहे, प्रथम तीर्थंकर बने। ऋषभदेव भगवान ने धर्म की मीमांसा को समझाया और बतलाया कि भोग विलास से दूर रहना चाहिय व त्यागमय जीवन बिताकर सर्वश्रेष्ठ मानव बनना होगा। ऋषभदेव चार सौ दिन निराहार रहकर अपने कर्मों का क्षय कर धर्मोपदेश देते हुए तीर्थकर बनकर अरिहंत कहलाये।

ऋषभ नरेश ने भारत की बिछुड़ी–पिछड़ी आदिवासी वनजीवी प्रजा को लोक स्वावलम्बी बनाने के लिए जैसे

- प्रजा में शिक्षा का अलख जगाया
- समाज को सभ्य बनाया
- ग्राम शिल्प का नया आयाम प्रशस्त किया
- अग्नि चेतन करने का सूत्र सिखाया
- कुंभकार की कला सिखाई
- भोजन पकाना सिखाया
- भवन गृह निर्माण की कला सिखाई
- वस्त्र बुनाने की कला सिखाई
- अंत्येष्टि कर्म का ज्ञान दिया
- अभिवादन करना सिखाया
- लग्न विधि बताई
- शास्त्र विद्या को सिखाई आदि।
- ऋषभदेव भगवान ने अपने कुल में लोक ज्ञान की ज्योत जलाई। अपनी संतानों के चेतना की मशाल थमाई।

– पुत्र भरत को 72 कलाओं में प्रवीण बनाया।

– पुत्र बाहुबली को प्राणी लक्षण की विद्या सिखाई।

ऋषभ नरेश का ही पुण्य प्रताप कि उनके कुल में समाज क्रान्ति का शुभारम्भ हुआ। ऋषभकाल में पुरातन प्रथा चली आ रही थी–भाई बहिन के विवाह की। पुत्री सुंदरी ने भाई भरत से परिणय सूत्र में बंधने का प्रस्ताव अमान्य कर दिया।

लोकत्राता ऋषभ नरेश ने अपने समय समाज को (प्रजा को) लोक कर्म ज्ञान–विज्ञान से जोड़ा। ऐतिहासिक प्रशान्त क्रान्ति के सूत्रधार ऋषभ नरेश ने लोक उत्थान के इस युगांतकारी अभियान को सम्पन्न कर श्रमण संस्कृति के वीतराग पथ को अपनाया। संपूर्ण विश्व में ऋषभ भगवान का कुल ही एक ऐसी मिसाल है कि जिसने त्यागपूर्ण तपस्या को फलीभूत कर जैन संस्कृति को लोकाधार प्रदान किया।

भगवान ऋषभदेव :

भगवान ऋषभदेव की विचारणा और चिंतारणा तथा अवधारणा राजस्थानी लोक संदर्भ में कई रूपों में रही हैं। जैनियों के प्रथम तीर्थंकर के रूप में जहाँ ऋषभदेव की विशिष्ट पूजा–अर्चना, मान–मनोति और आग्रह मान्यता के प्रसंग मिलते हैं वही लोक जीवन में लोकदेवता के रूप में इनकी स्थापना के कई पक्ष भी उद्घाटित हुए मिलते हैं।

विभिन्न स्तुतियों, स्त्रोतों, सज्जाओं, चौबीसियों, श्लोको, भजनों तथा रासों के माध्यम से प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की विभिन्न रूपा वन्दना के बहुआयामी स्वरूप नजर आते हैं। अन्य कोई महापुरूष, कोई देवता, कोई जिनेश्वर, कोई लोकेश्वर इतना आदरित और रूपान्तरित नहीं हुआ जितने ऋषभदेव हुए।

ब्रह्मा के रूप मे भी ऋषभ के चोपड़े पुछे गए हैं, तो विष्णु के रूप में भी इनके मंगलाचार पाये गए हैं। महेश के रूप में भी इनकी मनुहारें बखानी गई है और देवों के देव रूप में तो इनकी मान्यताएं है ही। ऋषभ कृषि के देवता भी है तो भूमि के भोमिया भी। ये दिनों के दिनकर भी है तो जिनवर आदिश्वर दीनानाथ और करूणाकार भी है। ऋषि–सिद्ध के दातार भी है, असि, मसि कृषि की स्थापना करने वाले हैं। प्रथम राजा, प्रथम शिशु, प्रथम केवली, प्रथम तीर्थंकर आप ही थे।

ऋषभदेव का यशोगान करने वाले कई आचार्य, मुनि, श्रावक सुधर्मी और ऋषि महात्मा हुए है। उनके गीतों की, स्तुतियों की गंगा–यमुना लोकसमुह को पावन कर आत्मोद्धार का मार्ग प्रशस्त कर रही है। ''बोल–बोल आदेश्वर व्हाला कांई थारी मरजी रे म्हासूं मूंडे बोल'' पद हजारों कंठों पर गूंजकर जीवनशुद्धि की बुद्धि देता सर्वमंगल बना हुआ है। कई लोग प्रतिदिन सोने से पूर्व और प्रातः उठने पर त्रि–देव नमन के रूप में नीचे वर्णित स्तुत का ध्यान करते हैं।

शांतिनाथ साता करें, पारसनाथ पार उतारो,
ऋषभदेव रक्षा करें, दुःख दर्द तो दूर करो ।।

जन्मोत्सव :

चैत्र कृष्णा अष्टमी की अर्द्धरात्रि के समय महादेवी मरूदेवी ने एक युगल संतान को जन्म दिया। पुत्र का जन्म होते ही चारों दिशाएं प्रकाश से जगमगा उठी। छप्पन दिक्कुमारियों आती है। 64 इन्द्र और अगणित देवी–देवता सम्मिलित होकर उत्सव मनाते हैं। यह तीर्थंकरों का जन्म कल्याणक उत्सव संसार में अद्वितीय उत्सव होता हैं। युवा होने पर ऋषभकुमार ने सुनंदानाम की एक अन्य युगलिया कन्या के साथ विवाह करके विवाह प्रथा को प्रारंभ किया। फिर नाभिराया ने सुमंगला के साथ उनका पाणिग्रहण करवाया। बहुत काल तक (63 लाख पूर्व तक) राज्य संभालने के बाद ऋषभदेव के मन में सांसारिक वस्तुओं के प्रति सहज ही विरक्ति होने लगी। सब जिम्मेदारियां पुत्रों को सौंपकर दीक्षा ग्रहण की।

दीक्षा कल्याणक :

एक वर्ष तक प्रजा को मुक्त हस्त से दान वर्षीदान देकर ऋषभदेव ने चैत्र कृष्णा अष्टमी के शुभ दिन अशोक वृक्ष के नीचे खड़े होकर स्वयं अपने हाथों से अपना केश लुंचन कर मुनि धर्म ग्रहण किया।

तेरा मंगल सबका मंगल होय रे,
सबका मंगल सबका मंगल होय रे
जिस गुरूदेव ने धर्म दिया उनका उनका मंगल होय रे,
जिन जननी ने जन्म दिया उसका मंगल होय रे
जिसने पाला पोषा, पढ़ाया उस पिता का मंगल होय रे,
इस जन्म के दृष्टिकोण प्राणी का मंगल होय रे
जल, थल, नभ में मंगल होय रे
अर्न्तमान मन की
ज्ञान द्वेष और मोह मिट जाए शीष झुकावे, मंगल होय रे
शुद्ध धर्म धरती पर जागे पापी का मंगल होय रे।
इस जन्म में सभी जीवों का मंगल होय रे।
शुद्ध धर्म का उदय होने घर–घर में शांति होयरे मंगल होय रे
तेरा मंगल मेरा मंगल सबका मंगल होय रे।

ईश वन्दन

तेरा मंगल सबका मंगल होय रे,
सबका मंगल सबका मंगल होय रे
जिस गुरूदेव ने धर्म दिया उनका उनका मंगल होय रे,
जिन जननी ने जन्म दिया उसका मंगल होय रे
जिसने पाला पोषा, पढ़ाया उस पिता का मंगल होय रे,
इस जन्म के दृष्टिकोण प्राणी का मंगल होय रे
जल, थल, नभ में मंगल होय रे
अर्न्तमान मन की
ज्ञान द्वेष और मोह मिट जाए शीष झुकावे, मंगल होय रे
शुद्ध धर्म धरती पर जागे पापी का मंगल होय रे।
इस जन्म में सभी जीवों का मंगल होय रे।
शुद्ध धर्म का उदय होने घर–घर में शांति होयरे मंगल होय रे
तेरा मंगल मेरा मंगल सबका मंगल होय रे।

श्री शान्तिनाथ भगवान मंदिर, समी (मेहसाणा)

श्री केसरिया जी का इतिहास

साध्वी श्री अभ्युदया जी म.सा.

जहाँ–जहाँ देवाधिदेव तीर्थकर परमात्माओं के च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान निर्वाण कल्याणक हुए हो, वे स्थान तीर्थ कहलाते हैं और जहां 100 वर्ष से प्राचीन परमात्मा अथवा मंदिर हो, वे भी तीर्थ कहलाते हैं। तीर्थ भूमि के परमाणुओं का एक अलग ही प्रभाव होता है। इसकी महिमा अद्‌भुत अलौकिक होती है।

आदिमं पृथिवीनाथ, मादिमं नि. परिग्रहम्।

आदिमं तीर्थनाथं च, ऋषभ स्वामिनं स्तुमः।।

प्रथम राजा, प्रथम मुनि और प्रथम मुनि तीर्थपति श्री ऋषभदेव स्वामी, तीन लोक की मर्यादा करने वाले, अवर्णनीय स्वरूवान, युग की आदि करने वाले, योगी और अरिहंत प्रभु श्री ऋषभदेव स्वामी को नमस्कार हो।

भगवान ऋषभदेव के भारतवर्ष में कई मंदिर है। जैसे कि पालीताणा (गुजरात), रणकपुर (राजस्थान), माउंट आबु (राजस्थान), केसरियाजी (राजस्थान) इत्यादि। इन सभी प्राचीन मंदिरों का इतिहास 10 वीं शताब्दी से 15 वीं शताब्दी का रहा है। वर्तमान में न केवल जैन बल्कि अन्य धर्मावलम्बियों के लिए भी ये तीर्थ स्थल काफी महत्वपूर्ण है। इन मंदिरों की बनावट पत्थरों पर उकेरी हुई बारीक कलाकृतियों, नक्काशी काफी मनोहर, प्रभावशाली एवं दर्शनीय है।

जैन तीर्थ स्थलों की अत्यन्त प्राचीनतम् श्रृंखलाओं में भगवान ऋषभदेव का तीर्थ भव्यता, चमत्कार तथा कला की दृष्टि से अलौकिक है। मेवाड़ के चार तीर्थ धामों में श्रीनाथजी, श्री एकलिंगजी, श्री चारभुजाजी एवं श्री केसरियाजी का विशिष्ट महत्व, विभिन्न सम्प्रदायों के लिये है, लेकिन श्री ऋषभदेव तीर्थ, जैन–अजैन, हिन्दु आदिवासी सभी धर्मावलम्बियों के लिये पावन स्थल है। मुख्य मंदिर में सभी धर्म के लोग बड़ी संख्या में दर्शन एवं पूजा अर्चना के लिए आते है। मुख्य मंदिर में स्थापित प्रतिमा भगवान आदिनाथ स्वामी का है। जिनका वर्ण (रंग) काला है और इसी वजह से यहां के स्थानीय एवं अन्य जाति के लोग भगवान को 'कालीया बाबा' नाम से भी संबोधित करते हैं।

यह विशाल शिखरबंद मंदिर जिनके मूलनायक श्री ऋषभदेव (श्री आदिनाथ) भगवान श्याम पाषाण की 41'' ऊँची अति प्राचीन व चमत्कारी यह मूर्ति पद्‌मासन मुद्रा में विराजमान है। गांव का पुराना नाम खेड़ा और बाद में धुलेव था। इस प्रतिमा का पूजन भक्तगण प्राचीन समय से ही केसर से करते चले आ रहे हैं, अतः इन्हें केसरियाजी कहते हैं। स्थानीय प्रदेश के आदिवासी भील इन्हें 'कालाजी बावजी', 'केशरिया बाबा', 'धुलेवाधणी' एवं 'केशरियालाल' कहते हैं।

इस मंदिर के मूलनायक भगवान ऋषभदेव की चिताकर्षण वीतराग प्रतिमा अति प्राचीन लगभग 2000 वर्ष पुरानी मानी जाती है। कहा जाता है कि मंदिर ईंटों का बना व बाद में आठवीं शताब्दी मे पारेवा नामक काले पत्थरों से बना। सम्वत् 1431 में जीर्णोद्धार होने के प्रमाण मिलते हैं, उसके बाद भी जीर्णोद्धार होने का उल्लेख है। भगवान ऋषभदेव की शानदार, चमत्कारी एवं असाधारण मूर्ति की प्राचीनता और इतिहास के बारे में कई मान्यताएं है। शास्त्रों में उल्लेख है कि इस प्राचीन प्रतिमा की प्रति वासुदेव रावण पूजा अर्चना किया करता था। यह आलौकिक प्रतिमा बीसवें तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत स्वामी भगवान के समय की है।

कई वर्षों तक (11 लाख वर्ष) लंका में रही और राम–रावण के युद्ध पश्चात मर्यादा पुरूषोत्तम श्री रामचन्द्र जी अयोध्या लेकर आये थे। बाद में उज्जैन में इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा कराई, जहां पर श्रीपाल राजा व मयणा सुंदरी ने नवपद की आराधना की। इसी प्रतिमा के प्रक्षाल से श्रीपाल राजा को कुष्ठ रोग से मुक्ति मिली। कालांतर में यह प्रतिमा उज्जैन से वटप्रद (बड़ौदा) जिला डूंगरपुर में रही जिसका प्राचीन मंदिर आज भी विद्यमान है। जो पुरातत्व विभाग के संरक्षण में हैं। यहां भगवान की पादुका स्थापित है, जिनकी केसर पुष्प से पूजा होती है। मुगलों के आक्रमण एवं प्राकृतिक आपदाओं के कारण मूर्ति को छिपाई गई और संवत् 928 में इसी ग्राम में प्रकट हुई।

वटप्रद तीर्थ काफी प्राचीन है, जैन तीर्थों की श्रृंखला में इस स्थान का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। मोडू (माण्डवगढ़) के मंत्री ने कई तीर्थों के निर्माण करवाए, इनमें से वटप्रद भी एक है। बाद में यह प्रतिमा ऋषभदेव ग्राम में कैसे पहुँची इसका कहीं वर्णन नहीं मिलता। वहां से ऋषभदेव जी के पगलिया जी के यहां स्थित पेड़ के तने में से यह प्रतिमा पुनः प्रकट हुई। इसी स्थान को पगलिया जी कहते हैं जहां पर भगवान की चरण पादुकाऐं है। ऐसी मान्यता है कि यहीं से धुलिया भील के कथन अनुसार यह प्रतिमा जमीन से निकली थी। धुलिया भील के नाम से यह गांव धुलेव कहलाता है। केसरियाजी को 'धुलेवा नगरी' के नाम से भी जाना जाता है, इस नाम के पीछे इतिहास कुछ इस प्रकार है ।

एक बार एक भील आदमी जिसका नाम भील धुला था, उसे भगवान ऋषभदेव की मूर्ति मिली। इस मूर्ति का स्वप्न स्वयं भील धुला ने देखा था और मूर्ति को प्राप्त किया। भगवान ऋषभदेव की मूर्ति मिलने के पश्चात भील धुला ने मूर्ति की रक्षा भी की तथा पूर्ण मन एवं श्रद्धा से पूजा अर्चना भी की, ऐसा माना जाता है कि भील आदिवासी समुदाय ऋषभदेव के प्रति बहुत वफादार है। मूर्ति के काले रंग की वजह से लोग भगवान ऋषभदेव को 'कालीया बाबा' नाम से भी संबोधित करते हैं और इनकी शपथ खाकर अपनी वफादारी का प्रतीक मानते हैं।

बड़ा मंदिर :

यह केसरियाजी का मुख्य मंदिर माना जाता है। यह मंदिर जैन समुदाय में से एक प्रमुख तीर्थ स्थल माना जाता है। केसरियाजी का यह मंदिर जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी से संबंधित है। मुख्य मंदिर को स्थानीय लोग बड़े मंदिर के नाम से भी बुलाते हैं। आदिनाथ भगवान की मूर्ति के पीछे अष्ट धातु प्लेट पर कुल 21 प्रतिमाएं बनी हुई है। जो पद्मासन मुद्रा में देखने को मिलती है।

मंदिर के बाहरी भाग में स्थान–स्थान पर छोटी–छोटी ताकों में जिनेन्दु प्रतिमाएं विराजमान है। चारों दिशाओं में चार उतंग शिखिर तथा छोटे–छोटे अनेक शिखर है। मूलनायक प्रतिमा पर एक शिखर बना है।

मूल मंदिर के आगे तीन खण्ड का प्रवेश द्वार शिल्पकला से सुसज्जित है। यहां पर सुंदर स्थापत्य कला के दर्शन होते हैं। इस मंदिर के उत्तरी अग्र भाग में एक ओर केसर घिसने का ओरीसा, दूसरी ओर आगे जाने पर मंदिर का प्राचीन भण्डार है। मंदिर के बाहरी प्रांगण में हाथी के उत्तरी छोर पर आह्वान कुण्ड बना हुआ है जिसे हवन कुण्ड भी कहा जाता है।

बाहर दक्षिण की ओर पार्श्वनाथ जी का मंदिर है जिसकी प्रतिष्ठा संवत् 1801 में हुई थी। श्याम वर्ण पांच फीट ऊँची भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा है। जिसे सहस्त्रफणी पार्श्वनाथ भगवान कहते हैं। पद्मासन में विराजमान है। केसरियाजी का यह पावन जिनालय मंदिर दूर से ही अति सौम्य प्रतीत होता है।

शिखरों, तोरण द्वारों व स्तम्भों की कला अति सुंदर है। ऋषभदेव मूलनायक मूर्ति के प्रति श्रद्धालु भारी मात्रा में दर्शन एवं पुजा अर्चना को आते हैं। मूर्ति पर अलग–अलग समुदाय के लोग आस्था से भगवान को केसर भेंट स्वरूप चढ़ाते है।

मंदिर में प्रवेश करते समय जल घड़ी की प्राचीनतम् तकनीक भी देखने को मिलती है। इस जल घड़ी के माध्यम से गार्ड समय का प्रमाण घंटा बजाया करता है। जल घड़ी प्राचीनकाल से समय मापक उपकरण के रूप में इस्तेमाल की जा रही है। इस अनोखी घडी को एक लकड़ी के बॉक्स में ताम्बे के बड़े भगोने में एक छेद वाला कटोरा रखा जाता है। जो 24 मिनट में पानी से भर जाता है। इस पर गार्ड समय की सुचना घंटा बजा कर देता है।

ऋषभदेव क्षेत्र के सभी समुदाय अर्थात् निवासी आपस में मिलने पर "जय केसरियाजी की" बोलकर संबोधित करते हैं। धुलेव ग्राम प्राचीन है और यह मूर्ति विक्रम सम्वत् की 10 वीं शताब्दी के आसपास यहां पर स्थापित है। पूर्व में यह मंदिर ईंटों का बना था। धीरे–धीरे समय के अनुसार जीर्णोद्धार होता गया। आज मंदिर जो विशालता लिए हुए वह पहले नहीं थी, जिसका बावन जिनालय की देवरियों को देखने से स्पष्ट होता है।

जैन समाज की सहिष्णुतावादी नीति है और वह हर जाति के सदस्य को सम्मान की

निगाह से देखता है। यह क्षेत्र आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र रहा। ये लोग भी काला बाबा को आराध्य देव मानते हुए पूजा करते हैं। नारियल एवं कुमकुम चढ़ाते है। चैत्र कृष्णा अष्ठमी को मेला लगता है जिसमें आदिवासी परम्परागत पौशाक में आकर नमन करते हैं।

मंदिर का सबसे प्राचीन लेख संवत् 1431 का है, इससे भली–भांति कह सकते है कि मंदिर का निर्माण इससे पूर्व का है। साधारण मान्यता यह है कि जीर्णोद्धार 200–300 वर्षों में हो जाता है अर्थात् 10–11 वीं शताब्दी में मंदिर निर्माण होना संभव है। यह भी हो सकता है कि पूर्ण निर्माण बाद में हुआ हो। मंदिर के शिखर पर काम करने के कारीगरों के नाम व सम्वत् 1685 भादवा वदि 5 सोमवार उत्कीर्ण है।

इससे यह कहा जा सकता है कि मंदिर 1685 में पूर्ण हुआ हो। संवत् 1437 वैशाख सुदि 3 शुक्रवार का लेख व संवत् 1572 वैशाख सुदि 5 सोमवार का लेख उत्कीर्ण है। इससे यह स्पष्ट होता है कि मंदिर का जीर्णोद्धार का कार्य होता रहा है। महाराणा प्रताप के समय में भामाशाह की वंशावली का अवलोकन करने पर यह पता लगता है कि केसरियाजी तीर्थ में ध्वजादण्ड चढ़ाने का व जीर्णोद्धार करने का उल्लेख है।

इसके बाद भी संवत् 1889 में श्री सुल्तानचंद जी बापना द्वारा भी ध्वजादण्ड चढ़ाया गया। इसके पूर्व भी महाराणा कुम्भा ने संवत् 1421 कार्तिक सुदि 5 को एक आदेश प्रसारित किया जिसमें तपागच्छ के श्री देवेन्द्रसूरि जी के बारे में लिखा जिसकी प्रति इस प्रकार है :

स्वस्ति श्री एकलिंग जी परसादातु सही राजाधिराज महाराणा जी श्री कुंभा जी आदेसातु मेदपाटरा उमराव थोबांदार का मदार समस्त महाजन पंच कस्य अप्रंच।

आपणे अठे श्री पुज तपागच्छ का देवेन्द्रसूरिजी का पग का तथा

पुनम्या गच्छ का हेमाचार जी को प्रमोद है धर्मज्ञान बतायो सो

अठे अणां का पगला होवेगा जणी ने मानांगा पुजांगा परथम

तो आगे सुंई आपणे गठ कोत में नीम दे जद पेलां श्री

रीखबदेवजीरा जो याने तोडेगा वीने राम पुगेगा .....

देवरारी नीमदेवाडे पुजा करे है अब अजुं ही मानांगा .....

धरम मुरजाद में जीव राखणो या मुरजाद लोपेगा जणीने .....

की आण है और फेल करेगा जणीने तलान है। सं. 1421 काती सुदि 5

मंदिर के सामने नव चौकी बनी हुई है। यह नव चौकी श्वेताम्बर समाज के आचार्य श्री जिनलाभ सूरि जी के उपदेश से बनवाई जिसका लेख मंदिर के दाहिनी ओर गोखड़ा के ऊपर उत्कीर्ण है जो इस प्रकार है :

संवत् 1843 वैशाख सुदि 15 पूर्णिमा तिथि रविवार वृहतखरतर

गच्छे श्री जिन भक्ति सूरि पटालंकार भट्टारक श्री 105 श्री जिनलाभ सूरिया

श्री राम विजयावी प्रमुख सहुक आदेशात् मनीपुर : श्री ऋषभदेव जी

बावन जिनालय की ओर देखे तो विदित होगा कि बावन जिनालय में स्थापित तीनों बड़ी देवरिया (मंदिर) की प्रतिष्ठा संवत् 1746 में नव चौकी की प्रतिष्ठा संवत् 1843 में तथा शिखर की 1685 का लेख उत्कीर्ण है।

शिखर के बाद ही बावन जिनालय बने होंगे। बावन जिनालय की केवल कोटड़िया (कमरे) है। पीछे बड़े मंदिर के गुम्बज की कला का भी अवलोकन करें तो यह कला 11 वीं शताब्दी की दृष्टिगोचर होती है।

यद्यपि यह प्रतिमा अति प्राचीन होते हुए भी राजस्थान के स्थापत्य में ऋषभदेव भगवान की प्रतिमा सर्वोपरि मानते हैं। कोई भी शुभ कार्य को करते समय आदिनाथ भगवान का स्मरण किया जाता है। वैदिक धर्म में ऋषभदेव भगवान को आठवें अवतार के रूप में बताया गया है जबकि जैन धर्म के वर्तमान चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर है। जैन व वैदिक आदिवासी लोग तो ऋषभदेव भगवान को मानते हैं लेकिन अंग्रेज लोग भी आदिनाथ भगवान को नमन करते हैं।

आदिनाथजी का लोहा अंग्रेज राज ने भी माना है, वह भी उसकी मनौती मनाने को विवश हुआ है। वह बड़े देव के रूप में केशरियाजी को याद करता है और मनौती लेता है। तब जाकर उसकी नाव पार लगती है। तब वह केशरिया जी जाकर अपनी मनौती पूरता है। देवता को नमन करता है। चांदी के थोड़े चढ़ाता है। गीत है :

भूरेविया राजा, पूख रे देसांनो है
दरिया बसोवस हे, नाव तो नास करे है
भूरियों वसार करे है, कूण मोटे रो देव है
हाथ जोडी ने अबो रे, खम्मा घणी खम्मा है
भारी मानता लेवे है, रूपाना घोडीला है
नाव तो सालवा लागी है, धूलेव आनी लागी है
घोडीला सडावे है

अर्थात् भूरिया राजा पूरब देश का है, समुद्र बीचों–बीच है, नाव नाश करती है। भूरिया विचार करता है। मौन बड़ा देव है, हाथ जोड़ खड़ा है। खम्माघणी अन्नदाता खम्मा है। बड़ी 'मानता' लेता है, चांदी का घोड़ा है, नाव चलने लगी। धूलेव आने लगी है। घोड़ा चढ़ाता है।

प्रातःकाल केशरियालाल का स्मरण करने से दिन कमाई वाला, जीविका देने वाला

निकलता है। इससे गृहस्थी का पेट पलता है। इस दृष्टि से केशरियानाथ का सुमिरन रोजी रोटी देने वाला है। एक प्रभाती की पंक्ति है –

''दाडो ऊग्यो रे / केसरिया नै शरणै के वाणु लो भले वाणिया''

केशरियानाथ का नाम ही अजब अनूठा है। उसके नाम से बेड़ियाँ और लोहे का ताला टूट जाता है। ''तेरा नाम से टूटे बेडिया र टूटे लोह का ताला.....''

यही नहीं, केशरियानाथ की आंगी को लेकर, उसके चमत्कार को लेकर कई गीत मिलते हैं। मेलों के लिए दिन–रात राह चलते विभिन्न स्तुतियों, स्त्रोतो, सज्जाओं, चौबीसियों, श्लोको, भजनों तथा रासों के माध्यम से प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की विभिन्न रूपा वन्दना के बहुआयामी स्वरूप नजर आते हैं।

अन्य कोई महापुरूष, कोई देवता, कोई जिनेश्वर, कोई लोकेश्वर इतना आदरित और रूपान्तरित नहीं हुआ जितने ऋषभदेव हुए। ब्रह्मा के रूप में भी ऋषभ के चोपड़े बांचे गये है, तेरे विष्णु के रूप में भी इनके मंगलाचार पाये गये है। महेश के रूप में भी इनकी मनुहारे बखानी गई है और देवों के देव रूप में तो इनकी मान्यताएं है ही।

ऋषभ कृषि के देवता भी है तो भूमि के भोमिया भी। ये दिनों के दिनकर भी है तो जिनवर, आदिश्वर, दीनानाथ और करूणाकार भी है। ऋषि–सिद्धि के दातार भी है। असि, मसि, कृषि की स्थापना करने वाले हैं। प्रथम राजा, प्रथम भिक्षु (श्रवण), प्रथम केवली, प्रथम तीर्थंकर आप ही थे।

ऋषभदेव देव का यशोगान करने वाले कई आचार्य, मुनि, श्रावक, सुधर्मी और ऋषि महात्मा हुए हैं। उनके गीतों की, स्तुतियों की गंगा–यमुना लोक समुह को पावन कर आत्मोद्धार का मार्ग प्रशस्त कर रही है।

''बोल–बोल आदेश्वर व्हाला कांई थारी मरजी रे म्हा सूं मूंडे बोल'' पद हजारों–हजार कंठों पर गूंजकर जीवनशुद्धि की बुद्धि देता, सर्वमंगल बना हुआ है।

कई लोग प्रतिदिन सोने से पूर्व और प्रातः उठने पर त्रि–देव नमन के रूप में

शांतिनाथ साता करो	पारसनाथ पार उतारो
ऋषभदेव रक्षा करो	दुःख दर्द दूर करो

असीम लोक श्रद्धा के देव ऋषभदेव अवसर्पिणी युग के प्रथम शासक (राजा) प्रथम नायक प्रथम शिक्षक, प्रथम श्रमण और प्रथम तीर्थंकर थे। असि, मसि ओर कसि (कृषि) से जुड़ी सर्व कहला, संस्कृति, विद्या, व्यापार और आचार विचार उन्हीं की देन है। उन्होंने मनुष्य को धर्म का मर्म, जीवन का मर्म एवं कर्म का मर्म बताया तथा पुरूषार्थ समझाया।

वे मानव सभ्यता और उसके जीवन सारोकारों के सिद्धान्त थे। उन्होंने भोग प्रधान वातावरण में जीने वाली मानव जाति को पुरूषार्थ एवं कर्म योग का संदेश दिया। श्रम और संयम का मार्ग दिखाया। अक्षर बोध दिया। वर्णमाला सिखाकर ज्ञान का द्वार खोला। लेखन, संगीत, नृत्य, कृषि और पाक विद्या सिखाई। परस्पर प्रेम, सद्भाव, आत्मरक्षा, सुरक्षा, संरक्षा की कला के साथ शास्त्र और युद्ध कला का ज्ञान कराया।

भगवान ऋषभदेव ने कहा बहुत कम, किया बहुत ज्यादा। सर्वसमृद्धि का सुख भोगने वाले ऋषभदेव अचानक अकिंचन बन गये। त्यागी–विरागी वे वीतरागी बन गये। सबके सनाथ बने, भगवान स्वयं के लिए अनाथ बन सर्वतोभावेन आदिनाथ बन गये। किसी को कुछ नहीं कहा। न धर्म की बात न श्रमण की बात कही। न त्याग की बात कही न तपस्या की बात कही।

बावजूद इसके चार हजार राजन्य पुरूष उनके अनुयायी (शिष्य) बन गये, उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया और जैसा ऋषभदेव करते रहे, उनकी देखादेख वे भी करते रहे। भूखे, प्यासे, तपते, ठिठुरते असह्य कष्टों की यातना भोगते रहे। इतने प्रभाव वाला, बिना कुछ उपदेश दिये समृद्धि भोगियों को सर्वरूपेण त्यागी बनाने वाला विश्व इतिहास में और कोई महापुरूष नहीं हुआ।

दर्शनार्थ : देवपुरी पारसनाथ, खेड़ ब्रह्मा गुजरात में खुदाई में निकली 500 वर्ष प्राचीन प्रतिमाएं

भगवान ऋषभदेव का जीवन दर्शन

– प.पू. साध्वी स्वर्णोदया श्रीजी म. सा.

राजस्थान की पावन भूमि को तीर्थस्थलों का संगम माना है। यहां की धरती पर अहिंसा, त्याग और मानव कल्याण के दर्शन का सूत्रपात होता है और उसके साक्षी है। विभिन्न दिशाओं में स्थित तीर्थ स्थान है जो अपने आप में एतिहासिक है। जो स्थापत्य कला में विलक्षण और समृद्ध संस्कृति के परिचायक है।

जैन धर्म में 24 तीर्थंकर हुए हैं। कुलकरों की कुल परंपरा के सातवें कुलकर नाभिराज और उनकी पत्नी मरूदेवी से जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव का जन्म चैत्र कृष्ण 7 की अष्टमी को अयोध्या नगरी में हुआ।

ऋषभदेव भगवान के पुत्र भरत, बाहुबली आदि 100, पुत्रियां दो जिनका नाम ब्राह्मी एवं सुंदरी था। ऋषभदेव भगवान का प्रतीक (चिन्ह) बैल है। भगवान ऋषभदेव को जैन धर्म में आदेश्वर प्रभु आदिनाथ स्वामी के नाम से भी जाना जाता है।

सभी कुलकरों के समय में दण्डनिति भी निर्धारित थी, प्रथम पांच के समय में हाकारो, द्वितीय पांच के समय में मकारो

कुलकरों ने उस समय के काल व परिस्थिति के अनुकूल अपनी व्यवस्था दी। लेकिन ऋषभदेव ने नवीन रूप से अवधारणा प्रस्तुत की

1) प्रथम तो स्वयं शासक (राजा) बनकर प्रजा के साथ अपनी संतान की तरह व्यवहार करने लगे। उन्होंने उच्च पुरूषों के लिए उपयुक्त नियम व दुष्टों के लिये दण्ड का प्रावधान निश्चित किये। इस व्यवस्था के लिए कई विभाग बनाए व कर्मचारी नियुक्त किये।

2) कल्पवृक्ष नष्ट होने से मनुष्य की इच्छा अनुसार वस्तुएं प्राप्त नहीं होने लगी तो वे फल–फूल, चावल, गेहूँ आदि खाने लगे तो शारीरिक दुर्बलता बनी रही व हजम नहीं हुआ तो पानी में गलाने व छिलके को उतार कर पत्तों का होना बनाकर प्रयोग करना बताया। समस्याऐं उत्पन्न होती रही। उसके अनुसार अग्नि की खोज, अग्नि को प्रवाहित करना अन्न पकाना व अन्य उत्पन्न करने की विधि बताई, इसके पूर्व शिल्पकला का भी ज्ञान कराया कि किस प्रकार मिट्टी का प्रयोग कर बर्तन बनाएं और अन्न को पकाएं।

देवालय स्वरूप

मंदिर जी के गर्भ गृह में स्थित मूलनायक मूर्ति भगवान ऋषभदेव की है। यह मूर्ति काले रंग (श्यामवर्ण) की है।

श्री केशरीया के आभूषण

देव आभूषण - प्रभुजी की आंगियाँ

केशरियाजी तीर्थ मेवाड़ राज्य में जैनियों का मुख्य स्थान रहा है। मेवाड के राणा सदैव केशरियानाथ प्रभु के अनुयायी रहे व श्रद्धाभक्ति से प्रभु के चरणों मे दर्शनार्थ आते थे।

1934 में मंदिर का संरक्षकत्व उदयपुर के महाराणा फतेहसिंह ने अपने हाथों में ले लिया। महाराणा फतेहसिंह ने प्रभु के लिये स्वर्णमयी जड़ित आंगी धारण करवाई जिसमें अनुमानित तीन हजार पांच सौ हीरे जड़े है। यह आंगी 11,000 के नकरे से आज भी चढ़ाई जाती है। यह नकरे की सबसे मूल्यवान आंगी है।

इसके अतिरिक्त और भी आंगिया प्रभु के चढ़ाई जाती है जिनमें मुख्य रूप से चांदी का खलक, बगल बण्डीनुमा मुलम्मा का खलक, कच्चे जड़ाई की आंगी आदि नकरे से चढ़ाई जाती है। सवा लाखेणी, पंचरत्न आंगी भी है।

भक्तजन नकरे के अनुसार आंगी धारण कराने का लाभ प्राप्त करते हैं। मंदिर की तरफ से राष्ट्रीय त्यौहारों पर प्रभु को आंगी धारण कराई जाती है।

प्रभु का जन्मकल्याणक महोत्सव (विशाल मेला)

पुस्तक के लेखन कार्य में महत्तवपूर्ण योगदान श्रीमान मोहनलाल जी सा. बोल्या का रहा है। आपको बहुत–बहुत साधुवाद ।

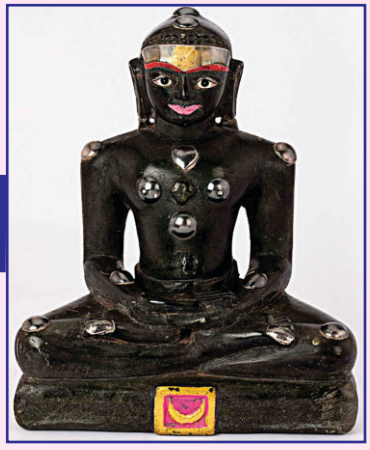

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र जी मोदी की अमेरिका यात्रा के दौरान लोटाई गई श्री चन्द्रप्रभुजी की प्रतिमा

श्री ऋषभदेव मन्दिर

धुलेवा क्षेत्र के भील जाति के आराध्य देव का इतिहास

– साध्वी श्री सत्योदया श्रीजी म. सा.

उदयपुर से लगभग 40 मिल दूर गांव धूलेव में स्थित भगवान ऋषभदेव का यह मंदिर केसरिया जी या केसरियानाथ के नाम से जाना जाता है। यह प्राचीन तीर्थ अरावली की कंदराओं के मध्य कोयल नदी के किनारे पर है। ऋषभदेव मंदिर को जैन धर्म का प्रमुख तीर्थ जाना माना है। यह मंदिर न केवल जैन धर्मावलम्बियों अपितु वैष्णव हिन्दूओं, मीणा और भील आदिवासियों एवं अन्य जातियों द्वारा भी पूजा जाता है।

प्रथम जैन तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के जन्म दिवस पर प्रति वर्ष आयोजित होने वाला प्रसिद्ध जैन तीर्थ ऋषभदेव का मेला चैत्र कृष्ण अष्टमी सुबह सुरक्षाकर्मियों द्वारा दी गई 21 बंदूकों से सलामी के साथ शुरू हुआ। मेले का आगाज होते ही मंगला के दर्शन खुले, जिसमें सैंकड़ों की संख्या में भक्तों ने मंदिर में पहुँचकर पूजा अर्चना की।

मेले के पहले दिन दोपहर 12.30 बजे विधि विधान के साथ मंदिर शिखर पर ध्वजा चढ़ाई गई। इसके बाद निकली शोभायात्रा में प्रभु ऋषभदेव की पालकी को निज मंदिर से पगल्याजी तक ले जाया गया। वहां भगवान की पूजा अर्चना की गई। इस मेले के तहत रात को जन्म कल्याणक आरती और मंगलदीप आरती की जाती है जिसमें हजारों की तादाद में श्रद्धालु भाग लेते हैं। मेले में दूरदराज के भक्तों की आवाजाही रहती है।

मेले के दूसरे दिन भगवान ऋषभदेव का मंगला दर्शन के पश्चात दुगधाभिषेक तथा जलाभिषेक किया जाता है। सुबह की आरती के बाद दिन भर केसरिया जी भगवान को केसर पूजा चढ़ती है जिसमें हजारों श्रद्धालु ''कालिया बाबा'' ऋषभदेव को केसर चढ़ाते हैं। दोपहर को आंगी धराने के साथ ही शिखर पर जयकारों के साथ ध्वजा भी चढ़ाई जाती है। कुंवारिया नदी, सूरज कुंड, पगल्याजी कुआं पर स्नान कर हजारों श्रद्धालु दर्शन के लिए पहुंचते हैं और कालिया बाबा से परिवार की सुख समृद्धि तथा खुशहाली की मन्नते मांगते हैं।

इस मेले में जैन धर्मावलंबियों के अलावा आदिवासी भी भारी संख्या में आते हैं। इस मेले में ग्रामीणों द्वारा तीर–कमान की जमकर खरीददारी की जाती है। तीर–कमान खरीदने में आदिवासी ने ज्यादा रूचि दिखाते हैं।

मान्यता :

तीर्थंकर ऋषभदेव की गर्भवती माता ने जो स्वप्न देखे, वे जैन धर्म में बहुत ही पवित्र माने जाते हैं। दिगंबर सोलह स्वप्न मानते हैं, वहीं श्वेताम्बरों में चौदह स्वप्नों की मान्यता है। भारत पर मुसलमानों के अधिकार के बाद मुसलमान लोग मंदिरों को नष्ट कर देते थे। अतः ऐसी

मान्यता है कि उस समय बने हुए अनेक बड़े मंदिरों में जान–बुझकर इस्लाम धर्म का कोई पवित्र चिन्ह बना दिया जाता था, जिसमें मुसलमान आक्रमणकारी उसे तोड़ नहीं पाऐं। पाषाण का एक छोटा सा स्तम्भ नौ–चौकी के मंडप के दक्षिणी किनारे पर खड़ा है, जिसके ऊपर –नीचे तथा चारों ओर छोटी–छोटी 10 ताखें खुदी हुई है। मुसलमान लोग इस स्तम्भ को मस्जिद का चिन्ह मानकर अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं।

निर्माण शैली :

मंदिर का प्रथम द्वार नक्कारखाने के रूप में है। बाहरी परिक्रमा का चौक नक्कारखाने में प्रवेश करते ही आता है। दूसरा द्वार भी वहीं पर है। काले पत्थर पर एक–एक हाथी दोनों द्वारों की ओर खड़े हुए है। हाथी के पास एक हवनकुंड उत्तर की तरफ बना है, जहाँ नवरात्रि के दिनों में दुर्गा का हवन होता है। उक्त द्वार के दोनों ओर के ताखों में से एक में सरस्वती की तथा दूसरे में शिव की मूर्ति है। सीढ़ियों के द्वार इस मंदिर में जाने की व्यवस्था है। सीढ़ियों के ऊपर के मंडप में मध्यम कद के हाथी बैठी हुई मरुदेवी की मूर्ति है। मंडप में 9 स्तम्भों के होने के कारण यह नौ–चौकी के रूप में जाना जाता है। यहां से तीसरे द्वार में प्रवेश किया जाता है।

प्रभु ऋषभदेव जब पाँचवी बार मुष्टि से अपने केश लौचन कर रहे थे, तब इन्द्र महाराज ने निवेदन किया – ''स्वामी ! यह शिखा (चोटी) आपके मस्तक व कंधे पर अत्यंत शोभायमान हो रही है, इसे रहने दीजिए।'' भगवान ने इन्द्र की प्रार्थना स्वीकार कर ली। इसी केश राशि के कारण ऋषभदेव का नाम केशी, केशरिया जी प्रसिद्ध हुआ।

अत्यंत भक्तिपूर्वक श्रेयांसकुमार ने इक्षुरस दानकर भगवान को वर्षीतप (एक वर्ष 40 दिन लगभग) का पारणा कराकर महान धर्म लाभ प्राप्त किया। वैशाख शुक्ला तृतीया का दिन 'अक्षय तृतीया' के नाम से पर्व के रूप में मनाया जाने लगा। आज भी वर्षीतप के पारणे के रूप में लाखों जैन इस महापर्व को मानते हैं।

केवल ज्ञान :

भगवान ऋषभदेव एक हजार वर्ष तक मौन युक्त कठोर तप करते–करते एक दिन विनीता नगरी के शकटमुख उद्यान में वट वृक्ष के नीचे शुक्त ध्यान में तल्लीन होकर मोह कर्म को नष्ट किया, परम पवित्र ज्ञानालोक प्रकट हुआ। ऋषभदेव प्रभु केवलज्ञान केवल दर्शन प्राप्त 'जिन' बन गये।

निर्वाण :

जब निर्वाण का समय नजदीक आया तो वे अष्टापद पर्वत पर पधारे। वहां भी उनके साथ हजारों मुनि थे। भगवान वहां एक शिलापट्ट पर पद्मासन मुद्रा में स्थिर होकर शुक्ल ध्यान में लीन हो गए। छह दिन तक निराहार निर्जल रहकर परम समाधिपूर्वक समस्त कर्मों का क्षय करके निर्वाण पद को प्राप्त किया।

सौधर्म स्वर्ग के अधिपति इन्द्र आदि असंख्य देवों तथा भरत चक्रवर्ती आदि मानवों ने मिलकर भगवान ऋषभदेव तथा अन्य मुनियों का निर्वाण महोत्सव मनाया।

तीर्थंकर कौन ? :

इस अनादि अनंत संसार में जीव विभिन्न योनियों में परिभ्रमण करता हुआ कभी देवगति, कभी त्रियचं, कभी मनुष्य और कभी नरक गति में सुख–दुःख का भोग करता रहता है। जीव के सुख दुख और जन्म–मरण का मुख्य कारण है, उसके भीतर रहे हुए राग और द्वेष के संस्कार या परिणाम।

राग–द्वेष के परिणामों के कारण वह शुभ–अशुभ कर्मों का बंधन करता है और उन शुभाशुभ कर्मों के फलस्वरूप विभिन्न योनियों/गतियों में परिभ्रमण करता है।

प्रत्येक जीव अनंत शक्तियों का पुँज है। ज्ञान का अक्षय प्रकाश तथा सुख तथा आनंद का अनंत स्त्रोत आत्मा में निहित है। ज्ञान एवं आनंद आत्मा का निज स्वभाव है। परंतु जन्म–जन्मान्तरों से अज्ञान एवं मोह में डुबे रहने के कारण आत्मा अपनी अनंत शक्तियों को प्रगट करने का पर्याप्त पुष्पार्थ नहीं कर पाता। पुरूषार्थ करता भी है तो राग–द्वेष के संस्कारों की संघनता कारण उसका पुरूषार्थ पूर्ण सफल नहीं हो पाता। इसलिए आवश्यकता है, राग–द्वेष की कृतियों पर नियंत्रण करने की।

आत्मा जब निज स्वरूप का बोध कर लेता है तो वह स्वयं की शक्ति को पहचान लेता है और धीरे–धीरे मोह एवं राग–द्वेष पर विजय प्राप्त करने का भी प्रयत्न करता है। राग–द्वेष को समूल नष्ट करने की यह दीर्घकालीन साधना ही संयम एवं समता का मार्ग, आत्मा, जब प्रबल पुरूषार्थ से, विविध प्रकार की तप ध्यान समभाव आदि की साधना द्वारा मन की राग–द्वेषात्मक ग्रंथियो (गाँठों) को क्षीण करने लगता है, तब वह निग्रन्थ बनता है।

निग्रन्थ भाव में रमण करते हुए आत्मा एक दिन राग–द्वेष का संपूर्ण क्षय कर मोह को जीत लेता है। मोह को जीतने के कारण आत्मा 'जिनपद' को प्राप्त करता है।

जिन का अर्थ है–विजेता, जिसमें राग–द्वेष नष्ट हो गये, मोह एवं अज्ञान का समूल नाश हो गया, मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन चार घातिय कर्मों का क्षय हो गया वह आत्मा 'वीतराग', 'जिन' सर्वज्ञा कहलाता है।

कोई भी भव्य आत्मा 'जिनपद' प्राप्त कर सकता है। सर्वज्ञ बन सकता है, परम आत्मा अर्थात् परमात्मा बन सकता है। किन्तु तीर्थंकर हर कोई आत्मा नहीं बन सकता, क्योंकि तीर्थंकर एक विशेष पुण्य प्रकृति का परिणाम है।

जो परमात्मा केवलज्ञानी अरिहंतदेव अपनी वाणी द्वारा अहिंसा सत्य आदि धर्मरूप तीर्थ की स्थापना करते हैं, सत्य आदि धर्मरूप तीर्थ की स्थापना करते हैं, साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविका रूप चार तीर्थ की स्थापना करके धर्म का प्रर्वतन करते है, वे विशिष्ट अतिशयधारी जिन भगवान 'तीर्थंकर' कहलाते हैं।

जैन आगमों की मान्यता है कि जो आत्मा विशिष्ट ध्यान तप आदि की साधना द्वारा तीर्थंकर नाम कर्म की पुण्य प्रकृति का बंध करता है, उसे ही 'तीर्थंकर पद' की प्राप्ति होती है।

एक अवसर्पिणी काल में केवली असंख्य हो सकते है, किन्तु तीर्थंकर केवल 24 ही होते हैं। तीर्थंकर चौबीस ही क्यों होते है ? सामाधान यह है कि यदि वस्तुओं की संख्या नियत न हो तो, तिथि, वार, नक्षत्र, तारा, ग्रह, समुद्र, पर्वत आदि नियत क्यों माने गये ? अर्थात् ये बहुत होने पर भी इनकी संख्या नियत है, उसी तरह तीर्थंकरों की संख्या भी प्राकृतिक नियमानुसार नियत है। एक अवसर्पिणी में ये चौबीस तीर्थकर धर्म के पुरस्कर्ता संघ के संस्थापक और दित्य अतितशय सम्पन्न होते हैं।

तीर्थंकर परमात्मा का अवतार नहीं होते हैं, किन्तु एक सामान्य आत्मा की भांति जन्म धारण कर विशिष्ट तप ध्यान समभाव आदि की साधना द्वारा तीर्थकर पद प्राप्त करते हैं इसलिए जैन धर्म में तीर्थंकरो को 'अवतार' नहीं कहा जाता किन्तु वह आत्मा का परम विशुद्ध विकसित रूप है।

हम जिस वर्तमान अवसर्पिणी काल में अभी रह रहे हैं, इस काल में भगवान ऋषभदेव से भगवान महावीर तक 24 तीर्थंकर हो चुके है।

पुस्तक की लेखनी आगे बढ़ाने में विशिष्ठ योगदान उदयपुर के जाने–माने विद्धान लेखक श्रीमान मोहनलाल जी सा. बोल्या का रहा है। आपको हार्दिक साधुवाद।

श्रीमान् गजेन्द्र जी भंसाली जिन्होंने लेखनी की भावना को आगे बढ़ाने में सहमति दी। आपका भी हार्दिक साधुवाद ।

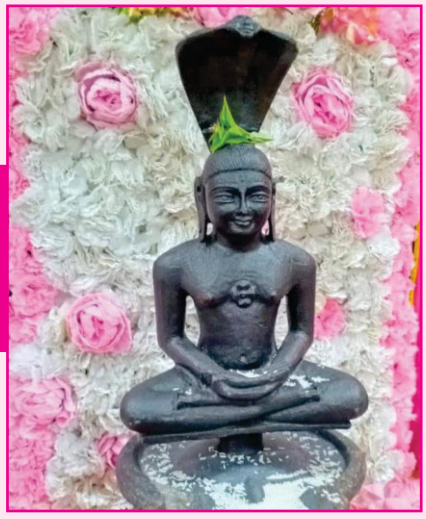

दर्शनार्थ :
माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र जी मोदी की अमेरिका यात्रा के दौरान लौटाई गई श्री पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा

श्री केसरिया जी तीर्थ का सम्पूर्ण विवरण

– मोहनलाल बोल्या

इस मंदिर का वर्णन व प्रतिमा के बारे में अधिक विस्तार न करते हुए सर्वप्रथम मूल प्रतिमा के बारे में जानकारी देने का प्रयास करेंगे।

कहा जाता है कि लंका पति रावण द्वारा पूजित भगवान केशरियाजी की वर्तमान प्रतिमा जो धुलेवा में बिराजित हैं। यह प्रतिमा राम–सीता द्वारा अपने देव विमान में रखकर लाई जा रही थी। रास्ते में उज्जैयिनी में देव विमान रुक गया जिससे पूजन हेतु स्थापित किया। तत्पश्चात् प्रतिमा जी अडिग रहने से खाराकुआ में जैन मंदिर बनाकर स्थापित की थी। यह प्रतिमा सदियों तक उज्जैयिनी (उज्जैन) में पूजित रही। कालांतर में यह प्रतिमा वर्तमान बड़ौदा (मेवाड) के डूँगरपुर जिले के वटप्रद नगर में एक पेड़ के वहाँ पर संवत 909 में प्रगट हुई। तत्पश्चात् यहां एक विशाल देवालय का निर्माण किया गया, जहां मूलनायक के रूप में केसरिया जी की उक्त प्रतिमा वर्षों तक पूजित रही।

12 वीं सदी के लगभग आक्रमणकारियों द्वारा जहां जिनालय तथा नगर का सांस्कृतिक वैभव नष्ट किया गया। यह प्रतिमा धुलेवा में भूमिगत हो गई। इस प्रकार बड़ौदा में भी केसरियाजी का प्राचीन स्थान माना जाता है। 19वीं सदी में यति तपस्वी रामसागरजी ने खण्डित देवल प्राचीन तीर्थ का जीर्णोद्धार करवाया। केसरिया जी के इसी प्राचीन स्थल खण्डित देवल वाले प्राचीन मूल स्थान पर जीर्णोद्धार कर मंदिर बनवाया गया। मूलनायक केसरिया जी की नई प्रतिमा तथा आदिनाथ प्रभु के प्राचीन चरण यहां स्थापित किये गये।

कहा जाता है कि यह नगरी किसी समय विशाल थी। चारों तरफ नगर में बिखरे पड़े पुरातात्विक अवशेष यहां की प्राचीनता के साक्षी है। आज भी अनेक स्थलों पर खुदाई के दौरान भूगर्भ से यहां कलात्मक शिल्प खण्ड प्रतिमाएं आदि निकलती रहती है। बड़ौदा में यात्रियों को रूकने के लिये उपाश्रय है। पूर्व सूचना देने पर भोजन की व्यवस्था भी हो सकती है।

तीर्थ सम्पर्क :

श्री जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ, बड़ौदा, जिला डूंगरपुर–314038

श्री मनोहरलालजी जैन कपड़ा व्यापारी, बड़ौदा, जिला डूंगरपुर

मोबाइल : 97838 84228

मंदिर व प्रतिमा इतिहास :

जैसा कि उपर वर्णन किया है कि बड़ौदा से केसरियाजी वर्तमान में पगलिया जी के पास प्रकट हुई। प्रतिमा को स्थापित करने के लिए सर्वप्रथम कच्चा ईंटों से बनाया गया। यह वही

स्थान है जहाँ मूल प्रतिमा विराजित है इसका जीर्णोद्धार मेवाड़ के महाराणा मोकल द्वारा (संवत् 1421–35) में कराया गया।

सदियों से अभिवादन के रूप में 'जय केसरिया जी की' बोलने तथा जैन श्वेताम्बर मंदिरों में प्रतिदिन आरती में "दूसरी आरती दीनदयाला, धुलेवा मण्डप में जग उजवाला" बड़े श्रद्धा एवं भक्तिमय से गाया जाता है। केशर पूजा के प्रभाव से केसरियानाथ के रूप में प्रसिद्ध ऋषभदेव परमात्मा की यह प्राचीन प्रतिमा श्वेताम्बर आम्नाएँ, मान्यता अनुसार कंदोरा एवं लंगोट सहित उत्कीर्ण है। प्रभु प्रतिमा का लंकापति रावण द्वारा पूजित होना, उज्जैयिनी में पूजित होने तथा बड़ौदा वटप्रद में भूगर्भ में प्रकट होने के पश्चात धुलेवा में भूगर्भ से प्रकट होने का इतिहास विस्तृत है।

केसरियाजी जिनालय स्थित लेख वि.सं. 1431 वैशाख शुक्ल 3 शुक्रवार, वि.सं. 1572, वि.सं. 1685, वि.सं. 1746 के ऐतिहासिक है। वि.सं. 1421 में कार्तिक सुदी 5 को महाराणा कुम्भा द्वारा श्वेताम्बर तपागच्छ के आचार्य श्री देवेन्द्रसूरिजी को रिखबदेवजी के बारे में आदेश प्रसारित किया गया था। आदेश आगे प्रकाशित किया गया है।

इसी प्रकार मुगल बादशाह अकबर द्वारा भी जैन श्वेताम्बर आचार्य श्री हीरविजयसूरि जी को यह तीर्थ का पहाड़ सौंपने का आदेश जारी किया गया था। वि.सं. 1673 महासुदी 13 के दिन श्वेताम्बर श्रेष्ठी भामाशाह ने धुलेवा स्थित श्री ऋषभदेवजी महाराज के मंदिर का जीर्णोद्धार कर प्रतिष्ठा करने का उल्लेख, वि.सं. 1688 में श्वेताम्बर मान्यता अनुसार हाथी पर बैठे–बैठे मोक्ष जाने वाली मरुदेवी माता की हस्ती आरुड प्रतिमा यहां प्रतिष्ठित करने का उल्लेख तथा उदयपुर के महाराणा फतेहसिंहजी द्वारा श्वेताम्बर मान्यता अनुसार प्रभु के लिये स्वर्णमय हीरे जड़ित आंगी चढ़ाने का उल्लेख, वि.सं. 1843 वैशाख शुक्ल पूर्णिमा के दिन श्वेताम्बर आचार्य श्री जिनलाभसूरि जी के उपदेश से नवचौकी आदि बनाने का उल्लेख ऐतिहासिक है।

वि.सं. 1960 में योगीराज श्री शांतिसूरीश्वरजी म.सा. द्वारा किये गये क्रांतिकारी अनशन आदि की घटना भी उल्लेखनीय है। केसरियाजी आधिपत्य का पहाड़ क्षेत्र ग्रीन मार्बल की बहुमूल्य खानों का होने से स्वार्थी तत्वों ने इस तीर्थ को विवादित बनाया था। उल्लेखनीय है कि सन् 1914 की लड़ाई में इन्दौर के एक दिगम्बर श्रीमंत ने ब्रिटिश हुकुमत को बहुत सहायता की थी, इसी कारण ब्रिटिश सरकार ने इस तीर्थ में हस्तक्षेप कर यहां दिगम्बर जैन बंधुओं को भी पूजा करने की अनुमति दी थी।

सन् 1421 में उत्कीर्ण लेख में ओस वंश का नाम भी उल्लेख है। इसके पूर्व दिगम्बर समाज का कोई हस्तक्षेप नहीं था। दिगम्बर अनुयायी एक अंग की पुजा किया करते थे जो वर्तमान में चालू नहीं है।

जैसा कि उपर वर्णन किया है कि यह मंदिर 1685 के पहले बना पाया जाता है। 1889 में जैसलमेर निवासी शाह सुलतानचन्द्र जी बापना परिवार ने संघ निकाला तथा स्वर्ण की आंगी भेंट कर ध्वज दण्ड चढ़ाया। संवत् 1984 में वैशाख सुदि 5 को श्री पूनमचन्द जी करमचन्द जी कोटा वाला पाटन (गुजरात) निवासी ने ध्वजा दण्ड चढ़ाया जिसका विधि विधान आगमों उद्धारक परम पूज्य सागरानन्द सूरीश्वर जी की पावन निश्रा में पुरा हुआ, जिसका लेख ध्वजा दण्ड की पाटखड़ी पर अंकित है।

यह ध्वजा दण्ड वर्तमान में मंदिर जी में सुरक्षित रखा हुआ है। जैन श्वेताम्बर श्रावकों के द्वारा समय–समय पर किये गये जीर्णोद्धारों एवं सेवा कार्य के अनेक शिलालेख एवं आचार्य विनय सागर जी की प्रतिमा आज भी इस मंदिर के इतिहास में स्थापित है।

प्रबन्ध : इस तीर्थ की सारी व्यवस्था विक्रम संवत् 1934 तक उदयपुर जैन श्वेताम्बर समाज के नगर सेठजी धुलेव के निवासी भण्डारीयों के माध्यम से करते आ रहे थे। वहां के भण्डारी को इस व्यवस्था के फलस्वरूप मेहताना के रूप में निज मंदिर के द्वार पर रखी हुई चांदी के पेटी की आय में से 34 प्रतिशत हिस्सा दिया जाता था। विक्रम संवत् 1933 में भण्डारी तथा नगर सेठ उदयपुर से तीर्थ की सारी व्यवस्था लेकर उदयपुर के प्रमुख ओसवाल जैन (श्वेताम्बरो) की एक व्यवस्था कमेटी गठित कर दिनांक 21.01.1878 को तीर्थ की सारी व्यवस्था सुपुर्द कर दी।

यह व्यवस्था देश की आजादी तक एवं प्रचलित रही। कमेटी का अस्तित्व 1955 में समाप्त हुआ। जब सरकारी आदेश के तहत मंदिर की चाबी कमेटी के सदस्यों ने देवस्थान विभाग के पदाधिकारियों को सुपुर्द कर दी। यहां यह उल्लेखनीय है कि जब–जब किसी कमेटी के सदस्य का स्वर्गवास हुआ तब महाराणा ने नये श्वेतांबरों जैन सदस्यों की नियुक्ति की थी।

वर्ष 1986 में ध्वज दण्ड चढाने के प्रश्न पर दिगंबर बंधुओं ने विवाद खड़ा किया। तत्कालीन जिला मेवाड़ जिले के तहत धुलेव ग्राम आता था। (वर्तमान के जिला कलेक्टर समकक्ष) ने अपनी रिपोर्ट दिनांक 29.05.1986 के महाराणा को सूचित किया कि मंदिर में ध्वजा दण्ड श्वेताम्बरों को ही चढ़ाने की परम्परा है। यद्यपि दिगंबर, वैष्णव एवं शैव भी यहां पूजा करते हैं। कुछ दिगंबर यहां लोगों को भड़काकर अशांति पैदा कर रहे हैं जिसके कारण सिपाहियों की अधिक संख्या में नियुक्ति की।

आजाद भारत की सरकार ने दिनांक 01.03.1955 को एक आदेश द्वारा कमेटी के समस्त जीवित सदस्यों को भण्डार की चाबियां लेकर उपस्थित होने का आदेश दिया (सीलबंद कोटड़ी) खोली जायेगी । एक मात्र उपलब्ध सदस्य श्री देवीलाल जी चौधरी चाबियां लेकर पहुंचे। अन्य ताले तोड़कर भण्डार की विपुल सम्पत्ति पर कब्जा कर लिया। दिनांक 03.03.1955 को बिना पुरा मिलान किये, वापस भण्डार बंद कर दिया। इस समय 6 सरकारी

अफसर तथा श्वेताम्बर समाज के केवल श्री देवीलाल जी चौधरी (उदयपुर) ही उपस्थित थे। यहीं से प्रारम्भ होता है। इस तीर्थ की व्यवस्था का काला दिन, दास्तान–ऐ– देवस्थान जो आज भी चालू है यानी सरकार ने व्यवस्था को सुधारने के नाम पर मालिकाना हक कायम करने, घृणित इतिहास लिखना प्रारम्भ कर दिया, तात्पर्य रक्षक ही भक्षक बन बैठे, बाड़ ही खेत को खाने लग गई। न्याय को गला घोंट दिया गया।

मई 1948 में श्रीमती जब्बल बैन ने तत्कालीन सेवा पुजा एवं व्यवस्था को सुधारने की मांग को लेकर अनशन किया, इस पर 15.05.1948 को संयुक्त राजस्थान सरकार द्वारा विज्ञप्ति निकाल कर यह जाहिर किया कि संवत् 1982 को देवस्थान विभाग द्वारा तैयार किये गये नक्शे के अनुसार ही कार्य होगा, पर अब देवस्थान विभाग की मिलीभगत से पुजा विधि की पुरी कड़ाई से पालना नहीं हो रही है। मन्दिर परिसर में अनाधिकृत निर्माण भी मन्दिर जी के स्वरूप को बदलने के लिए किया जा रहा है।

वर्तमान विवाद : 1962 में शासन सुभट पूज्य उपाध्याय श्री धर्मसागर जी म.सा. के निर्देशन में उदयपुर के श्रावक श्वेताम्बर, मूर्तिपूजक बंधुओं ने राजस्थान उच्च न्यायालय जोधपुर में एक रिट याचिका नं. 501 दि. 16.11.1962 में दायर कर यह मांग की ।

उज्जैन में कई वर्षों तक पूजने के बाद अज्ञात कारणों से यह प्रतिमा डुंगरपुर जिले के वटप्रदनगर जो आज बड़ौदा के नाम से जाना जाता है। वहां पर प्रकट हुई। वहां पर कई वर्षों तक रही होगी और बाद में वहाँ से अज्ञात कारणों से यह प्रतिमा धुलेवा नगर में एक पेड़ के वहां पर प्रकट हुई जो वर्तमान में पगलिया जी के नाम से विख्यात है। इस प्रतिमा के सर्वप्रथम श्री धुलिया भील ने दर्शन किए, इसलिए यह प्रतिमा भील जाति के आराध्य देव के नाम से भी पहचानी जाती है। इतिहास की दृष्टि से देखा जाए तो धुलेवा नगर बहुत प्राचीन है, इसका पट्टा भी मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा शीलादित्य ने भट्टीनाथ ब्राह्मण को दिया, ऐसा उल्लेख मिलता है।

कालान्तर में श्वेताम्बर समाज की बहुतायता रही होगी और वे ही इसकी पूजा करते हैं। प्राचीन समय में जैन धर्म एक ही था, आपस में कोई भेदभाव नहीं था। श्री ऋषभदेव भगवान का जन्म तीसरे आरे के उत्तरार्द्ध में होना पाया जाता है तब से महावीर भगवान के जैन में कोई भाग नहीं, जो महावीर भगवान के दीक्षा समय पर महावीर को देवस्य ओढ़ाया गया, उसके बाद उनके साधना करने में लीन रहने से उनका वस्त्र गिर गया तब से श्वेताम्बर व दिगम्बर समाज में धर्म का बँटवारा हो गया उसके पूर्व जो भी प्रतिमा का गढ़न होता था, वे निर्माण कराने के विचार व सोमपुरा (कारीगर) के विचारों पर आधारित होती थी।

जो वस्त्र (लंगोट) धारण की गई प्रतिमा को श्वेताम्बर पूजते हैं, इसी प्रकार वस्त्र विहीन प्रतिमा को दिगम्बर समाज पूजते हैं। कई वर्षों तक यही परम्परा चलती गई, वर्तमान में कई

मंदिरों में दोनों ही प्रकार की प्रतिमाएँ विद्यमान है और पूजित है। वर्तमान में वह देखा गया है कि कट्टरतावादी धारणा बहुत उदय हो गई है। पूर्व में भी यह विचारधारा रही होगी लेकिन इस सत्यता को परखा नहीं जा सकता लेकिन भारतीय सरकार ने सन् 1872 का गजेटियर के पृष्ठ संख्या 96 पर यह प्रकाशन हुआ जो निम्न है

(Indian Antiquary Vol. I 1872, Page 96)

FAMED RIKHABNATH : A large and ancient Naubatkhana (room for musicians) overhangs the great gate. The temple itself is made up of a series of temples, all connected ; in each are images of the Jaina Lords. Of course the great image is there. the inner shrine is shut off from the rest of the buildings by gates plated with silver.

Each full moon from the bhandar the high priest brings forth address valued at a lakh and a half of rupees where with to deck the god, whilst gold & silver vessels are used in puja. All day long devotees lie prostrate before the shrine, whilst others offer saffron upon pillars upon which are supposed impressions of the feet of the tod. All the rulers in Rajputana send gifts to Rishabnath-saffron, Jewels, money and in return receive the high priest's blessing. (Abridged from the Times.

have been brought form Gujrat towards the end of the thirteenth entuey Hindus as well as the Jains..... ..... the latter as one of the twenty four Tirthankers or hierachss of Jainism the Bhils Call him Kalaji, from the colour of the image and have great faith in him. Another name is Kesaryaji from the saffron (Kesar) with which pilgrims Besmere the idol. Every vatary is entitled to wash off the paste applied by a previous worshipper, and in this way Saffron worth thousands of rupees is fofered to the God annually.

यह जैन मन्दिर है, यह विवाद क्यों हुआ ? क्यों प्रकाशन की आवश्यकता हुई ? यदि इसका निराकरण उस समय हो जाता तो न तो यह प्रकरण विवाद और न ही आवश्यकता होती, कैसे भी समझे ? श्वेताम्बर समाज के पास ही इस मंदिर का इसका संचालन रहा और वर्ष 12.06.1932 में यही विवाद उत्पन्न हुआ और मेवाड़ राज्य द्वारा भी निम्न निर्णय पारित हुए। श्री पूज्य शांतिसूरिजी का आगम प्रवेश द्वारा तय हुआ लेकिन प्रशासन ने उस पर रोक लगाई फिर भी वहां पहुंचे तो उनका प्रशासन व श्रावकों ने धुमधाम से स्वागत किया।

(2) मंदिर की स्थापना : भगवान की प्रतिमा पेड़ के वहां मिलने पर उसके पास में ही बिराजित करवाई जिसको विश्राम स्थल कहा जाता है। उसके बाद वर्तमान काल का मूल मंदिर के स्थान पर ईंटों का छोटा मंदिर बनवाया गया। बाद में प्रतिमा को वहां पर इसी स्थान पर विराजमान कराई गई। परम्परा के अनुसार मूल गम्भारे के बाहर छोटा सभामंडप भी बना होगा और उसके साथ साथ ही पूजा भक्ति होती रही।

जैन साहित्य के अनुसार इस मंदिर का जीर्णोद्धार महाराणा मोकल ने करवाया जिसकी देखरेख, उस समय के मंत्री रामदेव सहस्त्रपाल के अनुसार केसरियाजी का मंदिर नवलखा परिवार के ये जो श्वेताम्बर समाज का है। उनका शासनकाल के समय यह वि. संवत 1421 व 1572 के लेख से इसकी पुष्ठी सन् 1572 से 1435 तक उस समय उनके .... में Indian Antiguary Vol. I और जैन मंदिर माना है जबकि ये श्वेताम्बर जैन मन्दिर था। अब लेख से ये भी स्पष्ट हो जाता है कि मंदिर का जीर्णोद्धार (मरम्मत) 14 शताब्दी में हुआ था और महाराणा मोकल का समय भी यही आता है।

जीर्णोद्धार के समय शिखर बना और बाह्य का सभा मण्डप भी शिखर पर दो कारिगरों ने मंदिर का सम्पूर्ण करते समय निज की मूर्तियाँ, चित्रकार, सूत्रधार की जगह खुद का शिखर (1) भगवान (2) लाछा और नाम के नीचे सम्वत् 1685 भादवा विद 5 सोमवार का लिखा है। इसलिये लेख से यह सिद्ध होता है कि शिखर का सम्वत् 1685 में सम्पूर्ण हुआ। 52 जिनालय और परिक्रमा क्षेत्र बनावट से स्पष्ट होता है कि 52 जिनालय की कोटड़िया में मंदिर का स्टाफ व मजदूर के सोने का स्थान था। 52 जिनालय को बाद में परिणित किया गया।

यहां बडी देवरी में श्री आदिनाथ भगवान की श्याम पाषाण की प्रतिमा स्थापित है। वहां के कार्यकर्ता एवं पुजारीगण इस प्रतिमा को नेमिनाथ की प्रतिमा कहते हैं, जो सही नहीं है। इसका मूल कारण यह है कि ऋषभदेव दीक्षा प्राप्त कर विचरण करते हुए कई लम्बे समय तक अयोध्या नहीं लौटे। तब मरुदेवी माता बिलख–बिलख कर रोती रही। लम्बे समय के बाद जब प्रभु ऋषभ लौटे तो खुले मैदान उपवन में ठहरे हुए थे। तब उनके भरत माता मरुदेवी को लेकर वहां मिलने गये।

बहुत सारा समुदाय दर्शन के लिए एकत्रित हुए थे तब माता ऋषभ–ऋषभ पुकारते हुए विलाप करती रही तब भी ऋषभ ने उनकी ओर नहीं देखा तब उस समय माता मरुदेवी को ये ज्ञात हुआ कि संसार असार है। ये विचार मन में आते ही उनको केवल ज्ञान प्राप्त हुआ और मोक्ष की प्राप्ति हुई। लिखने का तात्पर्य यह है कि दिगम्बर समाज स्त्री को मोक्ष होना नहीं मानते। इसलिए यह मंदिर श्वेताम्बर समाज की परम्परा का है।

(1) श्री पार्श्वनाथ भगवान की श्याम पाषाण की 21" ऊँची प्रतिमा है।

(2) श्री जिनेश्वर भगवान की श्याम पाषाण की 19" ऊँची प्रतिमा है। इस पर संवत 1746 वर्ष का लेख है।

(3) श्री पार्श्वनाथ भगवान की परिक्रमा के क्षेत्र में श्याम पाषाण की 27" ऊँची व सर्प के फण तक 30" ऊँची प्रतिमा है।

इन प्रतिमाओं के आगे बढ़ते है तो इसी कतार में मुनि श्री विजय सागर जी की प्रतिमा विराजित है।

इसके नीचे लेख 1756 का है जो श्वेताम्बर समाज से सम्बन्धित है। ऐसा कहा जाता है कि दयालशाह का किला राजसमंद पर स्थापित मन्दिर की प्रतिष्ठा करवाकर विहार करते हुए केसरिया जी पधारे व यही पर वे कालधर्म को सिधारे।

हाथी के पास 3" ऊँची श्वेत पाषाण के चबूतरे पर चरण पादुका दो हिस्सों में (26"x18") पर 11 जोड़ी पादुकाएँ जो संभवतया गणधर भगवंत के हो सकते हैं तथा दूसरे हिस्से (19"x12") पर 24 जोड़ी चरण पादुका जो संभवतया 24 तीर्थंकर भगवंत के हो सकते हैं।

इसके किनारे पर लेख है ऐसा भी उल्लेख है कि श्री शान्तिचन्द जी व श्री भानुचन्द जी (जो श्री हीरविजय सूरि के शिष्य) शांतिचन्द्र व भानुचन्द्र विजय के चरण पादुका मरुदेवी माता के पास स्थापित है। इन दोनों शिष्यों को श्री हीरसूरि जी द्वारा अकबर के निवेदन पर उपदेश देने के लिए दिल्ली ही रहने को कहा।

(1)

श्री केसरिया जी तीर्थ के सम्बन्ध में वर्णन करने के पूर्व श्री आदिनाथ प्रभु के जीवन चरित्र के बारे में जानना आवश्यक है।

ऋषभदेव तीर्थ एक ऐसा तीर्थ है जिसकी स्पर्शता का परम सौभाग्य हमें अपने भाग्योदय के कारण होता है। यह ऐसा तीर्थ है जो असंख्य आत्माओं को निश्चित ही सद्गति, सद्मति प्रदान कर रहा है। उस समय जीवन सरल व प्राकृतिक था। मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 10 प्रकार के कल्पवृक्षों ही आवश्यकता की पूर्ति कर रहे थे। किसी प्रकार का संघर्ष नहीं था लेकिन तीसरे काल के अवसान में शंका समस्याएँ होने लगी तो इस काल में कुलकरो (मनु की उत्पत्ति हुई) जिसका वर्णन आगे किया जा रहा है।

श्री केसरिया जी (मेवाड़) तीर्थ, धुलेवा नगर (उदयपुर)

भौगोलिक व अन्य विवेचन

- मोहनलाल बोल्या

आदिनाथ भगवान की जीवन समीक्षा :

यह तीर्थ मेवाड़ का सबसे अधिक प्राचीन तीर्थ है जो उदयपुर से 65 किलोमीटर व अहमदाबाद से 210 किलोमीटर दूर मुख्य सड़क से लगभग 2 किलोमीटर भीतर में स्थित है, यह तीर्थ गांव के बीच में स्थित है। इस तीर्थ का इतिहास का वर्णन करने के पूर्व श्री आदिनाथ भगवान (केसरियाजी) के जीवन चरित्र के बारे में जानना आवश्यक है। केसरियाजी का वर्णन जानने के लिए भगवान का जीवन चरित्र जानना जरूरी है।

जैन साहित्य के अनुसार भरत क्षेत्र में समय चक्र को (काल–चक्र) दो भागों में विभाजित किया जाता है जिसको आरा कहा जाता है।

ये आरे भी दो प्रकार के होते हैं : (1) अवसर्पिणी काल (2) उत्सर्पिणी काल

प्रत्येक आरे में छः–छः आरे होते हैं अतः कुल 12 आरे होते है। प्रत्येक आरे का समय निश्चित है और कोई कम वर्ष तो कोई अधिक वर्ष का होता है। श्री ऋषभदेव भगवान का जन्म अवसर्पिणी काल के तृतीय आरे के उत्तरार्द्ध में हुआ था।

प्राचीनकाल में सन्तानों की उत्पत्ति युगल के रूप में होती थी अर्थात् एक पुत्र व एक पुत्री युगल काल में उत्पन्न होते हैं अर्थात् इस समय को युगलिक काल कहते थे अर्थात् भाई–बहन वे ही आपस में विवाह करते रहते थे।

ऋषभदेव भगवान अंतिम 15 वें कुलकर थे और यहां से ही युगलिक काल की समाप्ति हो जाती है। संयोग की बात थी कि किसी अन्य मनुष्य के युगलिक का जन्म हुआ था, वह युगलिक माता–पिता अपने युगलिक संतान को लेकर एक वृक्ष के नीचे सोया हुआ था, तब पेड़ की शाखा टूट कर गिर जाने से नर बालक की मृत्यु हो जाती है तो वह पुरूष (पिता) स्त्री युगलिक को छोड़कर चल देते है जब ऋषभदेव को सूचना मिली कि एक कन्या सोई हुई है, जाकर देखा तो ज्ञात होता है कि नर युगलिक की मृत्यु हो गई और बालिका जीवित तो बालिका को अपने महल में ले आए और उसका लालन–पालन होते गया बालिका का नाम सुनन्दा रखा गया और समय सुमंगला का ऋषभदेव के साथ विवाह किया। यहां पर ऋषभदेव भगवान की दो पत्नियां हो गई (1) मंगला (2) सुनन्दा

पहली पत्नी (मंगला) के भरत व सुन्दरी हुए और सुनन्दा के बाहुबलि व ब्राह्मी हुए और बाद 98 पुत्र हुए अतः 100 पुत्र व दो पुत्रियां कुल 102 सन्तान हुई। श्री ऋषभदेव भगवान के इस भव के पूर्व 10 भव हुए और इस प्रकार यहां पर कुल कर युगलिक काल की समाप्ति हुई।

जम्बूद्वीप सूत्र के अनुसार सभी ने समय परिस्थिति के अनुसार समाज के कार्य किये जो उनके नाम के आगे वर्णन है।

1) सुमति (सन्मति) : मनुष्य जाति को सूर्य, चन्द्र का ज्ञान कराया।
2) प्रति सूरि (प्रतिसूत्र) : नक्षत्र, ताराओं का ज्ञान कराया।
3) सीमंकर : अन्य वस्तुओं से निर्भर व पालतू बताया।
4) सीमंधर : हिंसक पशुओं से रक्षा करना बताया।
5) क्षेमकर : कल्पवृक्ष नष्ट हो जाने से प्रत्येक खाने योग्य वस्तुओं का ज्ञान कराया, समूह का क्षेत्र निर्धारण करना और अपराधी को सजा देना प्रारम्भ किया।
6) क्षीमधर : व्यक्ति व सम्पत्ति का अधिकार निश्चित की।
7) विमल वाहन : प्रत्येक वस्तु पशु जैसे हाथी को पालतू करना, सवारी करना सिखाया
8) चतमुस्मान (चक्षुमान) : युगलिया जन्म देकर स्त्री पुरूष मर जाते थे और युगलिया सन्तान स्त्री पुरूष की तरह जीवन यापन करते थे लेकिन युगलियों के बाद जीवित रखना सिखाया।
9) यशस्वी (यश्यवान) : युगलिया दम्पति सन्तान को स्नेह करना सिखाया।
10) अनिचन्द्र : संतान का लालन–पालन सिखाया।
11) चन्द्र मान, चन्द्र : लोगों को शीत, वर्षा, गर्मी से बचने की विधियां सिखाई।
12) श्रेस्जित प्रेषी : इस समय मौसम ने विकराल रूप लिया था, इसलिए मनुष्य के मार्गदर्शन, प्राकृतिक प्रकोप आदि से बचने का उपाय सिखाया।
13) मरुदेव : शिशु पालन की विधिया सिखाई
14) नाभिराजा : भूख मिटाने के लिए स्वतः उत्पन्न साल, चावल, आदि का प्रयोग करना सिखाया।

लेकिन भद्र श्री भद्रबाहु स्वामी द्वारा रचित कल्पसूत्र में केवल अंतिम सात कुलकर का ही वर्णन है इस सम्बन्ध में विस्तृत अनुसंधान की आवश्यकता है।

उक्त कुलकरों द्वारा भी कार्य किए गए थे लेकिन श्री ऋषभदेव भगवान सभी प्रकार का ज्ञान दिया, संक्षेप में असि, मसि, कृषि के ज्ञान के से भी उनकी पुत्रियों की कला व गणित का ज्ञान भी दिया।

(2) अब ऋषभदेव भगवान के मंदिर व प्रतिमा का वर्णन इस प्रकार है :

धर्मावलम्बियों व प्राप्त जैन साहित्य के अनुसार यह मान्यता है कि वर्तमान में जो प्रतिमा विद्यमान है। वह श्रीलंका में स्थापित थी ओर इसको लंकापति श्री रावण द्वारा पूजा की जाती थी। श्री राम व रावण के बीच युद्ध हुआ और रावण पराजित हुआ। श्री राम द्वारा युद्ध विजय प्राप्त कर जब लंका में लौटे तब वे इसी प्रतिमा को अपने साथ लाए और अयोध्या ले जाने का उल्लेख एक पुस्तक में मिलता है जिसका उल्लेख जैन तीर्थ में है।

लेकिन मार्ग में ही राम द्वारा उज्जैन में विश्राम किया व मूर्ति को उज्जैन में स्थापित की। यह सम्भव है कि जैन धर्मावलम्बियों की प्रार्थना पर मूर्ति को उज्जैन में ही स्थापित की। उज्जैन में खाराकुंआ में स्थापित आदिनाथ भगवान के मंदिर में उत्कीर्ण शिलालेख होने की जानकारी मिली लेकिन सोमवती अमावस्या होने से मंदिर बन्द था। वहां दर्शन नहीं हो सके इसलिए यह प्रमाणित नहीं किया जा सकता।

उज्जैन से यह मूर्ति अज्ञात कारणों से वटप्रद नगर (बड़ौदा) डुंगरपुर (राजस्थान) में प्रकट हुई वहां पर लम्बे समय तक पूजित होती रही बाद में वहां पर एक देवरी में चरण–पादुका स्थापित है जो अति प्राचीन है। जिसके फलस्वरूप भारत सरकार के संरक्षण नियम के अनुसार यह क्षेत्र संरक्षित किया जिसकी सूचना, सूचना पट्ट पर लगी हुई है। तत्पश्चात् इसके पूर्व अप्रमाणित प्रमाण से यह मूर्ति वहां से अन्यत्र चली गई और धुलेवा नगर से दो किलोमीटर दूर एक वृक्ष के वहां प्रकट हुई। यहां पर इस मूर्ति के सर्वप्रथम दर्शन धुलिया भील ने किए इसलिए मुर्ति का रंग काला होने से ऋषभदेव काला बाबा के नाम से जाना गया और ये ही भील जाति के आराध्य देव कहलाने लगे।

भील जाति के आराध्य देव होने के कारण विश्वास, आस्था कूट–कूट कर इनके दिल में भरी हुई है। वे इन भगवान की कसम (सौगन्ध) खाने पर वे कभी झूठ नहीं बोलते, सभी बातें या अपराध होने सच्चे रूप से कहते हैं।

धुलेव ग्राम का दान पत्र (679 ई.) का ताम्बे की चादर को कूट–कूट कर तैयार कर संस्कृत भाषा में खोदा गया है। इसकी लिपि महाराणा अपराजित के समय का है। किष्किन्दा (कल्याणपुर) के महाराज मेठी ने अपने महामात्य अधिकारियों आदि से आज्ञा लेकर अवगत कराया कि महाराज बप्पदत्त के श्रेयार्थ तथा धर्मार्थ उच्चरक गाँव के भट्टिनाथ नामी ब्राह्मण के अनुदान में दिये। इस समय 23 वर्ष अर्थात् हर्ष सम्वत् 736 (679 ई.) अनुमानित किया जाता है इसमें दिये गये सम्वत् को सत्वागुण सम्वत् कहा गया है। इसमें महाराजा मेठी व भट्टिनाथ के हस्ताक्षर के चिन्ह अंकित है। इसमें बप्प दत्त महाराज का नाम भी आया है। अतः यह समय सातवीं शताबदी का है।

ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि व प्रमाण

"शांतिसूरि राज्ये सूर्यवंशी महाराज शिलादित्य वंशे गुहिदत्तराउल श्री बप्पाक श्री खुमाणादि महाराजात्वये राणा हमीर श्री खेतसिंह श्री लखमसिंह पुत्र मोकलसिंह मृगांगवंशोद्योतकार प्रतापमार्तण्डावतार राणा श्री कुंभकरण पुत्र राणा रायमल्ल विजयमान प्राज्यराज्ये तत्पुत्र महाकुंवर श्री पृथ्वीराजानु शासनात् श्री उकेशवंशे रायज री गोत्रे राउल श्री लाखण पुत्र मं. – दूदवंशे, मं. मयूर मं. सादुल तत्पुत्राभ्यां मं. सीहासमदाभ्याम् सद्बांधव मं. कर्मसी धारा लाखादि सुकुटम्ब्युताभ्यां श्रीनंदकुल वत्यापुर्या सं. 964 श्री यशोभद्रसूरि मंत्र शक्तिसमानीमायात० सायरकारितदेवकुलादृद्धारतः सायर नाम श्री जिनवसत्यां श्रीआदिश्वरस्य स्थापना कारिता कृता श्रीशांतिसूरि पट्टे देवसुंदर इतयवर शिष्यनामभिः आ० श्री इश्वरसूरिभिः इति लघुप्रशस्तिदियम् लि. आचार्य श्रीइश्वरसूरिणा उत्कीर्णा सूत्रधार सोमाकेन–शुभं।"

उपरोक्त शिलालेख सं. 964 में सांडेर गच्छोत्पति और राज्य में निकट सम्बन्ध राज्यवंशज नामावली और गच्छ पाटानुपाट नामावली का संक्षेप उल्लेख राज्य शासन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध का प्राचीन ज्वलंत उदाहरण है। इससे यह सिद्ध होता है कि 1964 में श्वेताम्बर समाज का सम्बन्ध था।